5

मसीह, हमारा महायाजक (भाग 2)

(5:1--14)

महायाजक के रूप में हारून पर मसीह की श्रेष्ठता (4:14—5:10) (क्रमशः)

महायाजक की भूमिका (5:1-4)

[1]क्योंकि हर एक महायाजक मनुष्यों में से लिया जाता है, और मनुष्यों ही के लिए उन बातों के विषय में जो परमेश्वर से सम्बन्ध रखती हैं, ठहराया जाता है; कि भेंट और पाप बलि चढ़ाया करे। [2]वह अज्ञानों, और भूले-भटकों के साथ नरमी से व्यवहार कर सकता है इसलिए कि वह आप भी निर्बलता से घिरा है। [3]और इसी लिए उसे चाहिए, कि जैसे लोगों के लिए, वैसे ही अपने लिए भी पाप-बलि चढ़ाया करे। [4]यह आदर का पद कोई अपने आप से नहीं लेता, जब तक कि हारून के समान परमेश्वर की ओर से ठहराया न जाए।

आज प्राचीन यहूदीवाद में महायाजकाई के साथ जुड़ी पूरी शक्ति, महिमा, ठाठ-बाठ, शान और सम्मान की कल्पना करना कठिन है। जोसेफ़स के अनुमान में यह पद हर सम्मान से बढ़कर था।[1] जेम्स बर्टन कॉफ़मैन का निम्न विवरण इसे समझने में सहायक हो सकता है:

> बेशक यहूदी महायाजक की सांसारिक शान मसीही लोगों पर, विशेषकर यहूदी पृष्ठभूमि वाले, आकर्षक प्रभाव का एक कारण थी। उसके मंहगे कपड़े, अत्यधिक सजीला कवच, प्रायश्चित के दिन परम पवित्र स्थान में प्रवेश करने का विलक्षण सुअवसर, न्यायी और महासभा के प्रधान के रूप में उसका रुतबा, यहूदी जाति के आधिकारिक प्रतिनिधि के रूप में उसका नाटकीय प्रभाव विशेषकर उस समय जब उनका कोई राजा नहीं था, हारून के पुत्रों से इस पद का पारम्परिक कुल और निर्गमन की पुस्तक तक पीछे, और इस पद को न चाहते हुए भी दिया जाने वाला सम्मान, यहां तक कि रोमी विजेताओं द्वारा भी-ये सब बातें और अन्य कई बातें यहूदी महायाजक को लोगों की नज़रों में निराली शान वाले रुतबे तक ऊंचा करती हैं।[2]

यहूदी लोग आम तौर पर चाहे हेरोदेस को उच्च मानते थे पर न चाहते हुए भी वे सुलैमान के समय से अद्वितीय सुन्दरता वाले मन्दिर के पुनःनिर्माण में उसके काम के लिए उसकी सराहना करते थे। महायाजक को दिए जाने वाले आदर का सम्बन्ध मन्दिर के प्रभाव से जुड़ा था।

यीशु के प्रेरित चाहते थे कि जैसे वे मन्दिर की प्रशंसा करते हैं, वह भी करे (मत्ती 24:1, 2)। महायाजक के बारे में प्रेरितों का बदला हुआ विचार न केवल यीशु के साथ उनके होने

बल्कि आत्मा द्वारा शक्ति दिए जाने से भी बना। आत्मा से शक्ति पाने के बाद गलील के बारह लोग जल्दी जल्दी महायाजक और उसके दरबार के सामने अपने नये विश्वास की रक्षा करने के लिए खड़े होने के लिए दिलेर हो गए। उस विश्वास के लिए जिसमें यह सच्चाई थी कि व्यवस्था क्रूस के साथ मिटा दी गई है (प्रेरितों 1:6-8; 2:1-4; 4:13)। वे मूसा के प्रबन्ध के सम्बन्ध में एक नये दृष्टिकोण में आ गए थे।

महायाजक क्या भूमिका निभाता था? आइए "बड़े महायाजक" यीशु के सम्बन्ध में उस भूमिका को देखते हैं।

आयत 1. अध्याय का आरम्भ इन शब्दों से होता है, **क्योंकि हर एक महायाजक मनुष्यों में से लिया जाता है, और मनुष्यों ही के लिए उन बातों के विषय में जो परमेश्वर से सम्बन्ध रखती हैं, ठहराया जाता है।** याजक की आवयश्कता परमेश्वर से मनुष्य के अलगाव का संकेत देती है। परमेश्वर के पास जाने में हमारी एक समस्या है और वह समस्या पाप है, जो हमें परमेश्वर से अलग करती है (यशायाह 59:1, 2)। एक अर्थ में सब मसीही परमेश्वर के याजक हैं (1 पतरस 2:5, 9)। एक और अर्थ में हमें परमेश्वर की आराधना करने की कोशिश करके और उसके अनुग्रहों को पाने के लिए पिता के पास अपनी *पूरी पहुंच* होने के लिए हमारा महायाजक होना आवश्यक है। हमें एक विनती करने वाले की आवश्यकता है, जो परमेश्वर को जानता है, जिसका उसके साथ सम्बन्ध है और जो हमारी कमियों को समझता है। अपने महायाजक और मध्यस्त यीशु मसीह के बिना हमारा परमेश्वर के साथ वह सीधा सम्बन्ध नहीं हो सकता था।

महायाजक के लिए **भेंट और पाप बलि चढ़ा**ना आवश्यक था। 5:1-4 में महायाजक और उसके काम के बारे में कही गई बातें वर्तमानकाल में है। उसके द्वारा की जाने वाली मन्दिर की सेवाएं अभी भी थीं। परन्तु आराधना के उस प्रबन्ध की अब कोई आवश्यकता नहीं थी, क्योंकि इसके अधीन किए जाने वाले सभी बलिदानों को यीशु में पूरा कर दिया गया था। इसलिए उन्हें पक्के तौर पर हटाए जाने की आवश्यकता थी।

जिस आदर को यहूदी विश्वासियों ने अपने महायाजक के साथ जोड़ दिया था, उससे यह आवश्यक हो गया कि मसीही लोगों को समझ हो कि उस भूमिका को अब मसीह कैसे पूरा करता है। उन्हें यह देखना था कि स्वर्गीय महायाजक के रूप में यीशु ने, जो उस से जो व्यवस्था ने दिया था कहीं बढ़कर है, मानवीय महायाजक का स्थान ले लिया।

आयत 2. पृथ्वी के महायाजक के लिए लोगों के बीच में एक आदमी का होना आवश्यक था। पाप के लिए बलिदान भेंट करने वाले के रूप में उसे **अज्ञानों, और भूले-भटकों के साथ नरमी से व्यवहार** करना आना आवश्यक था (5:3 पर चर्चा देखें)। याजक हारून के परिवार में से आते थे (निर्गमन 29:9); महायाजक को परमेश्वर द्वारा चुना जाता, बुलाया जाता और नियुक्त किया जाता था।

महायाजक की दो सबसे आधारभूत विशेषताएं सहानुभूति रखने वाला मानवीय स्वभाव और ईश्वरीय नियुक्ति थे। इब्रानियों की पुस्तक दिखाती है कि यीशु ने याजकाई के लिए इन दोनों योग्यताओं को पूरा किया। जब हम दुखी होते हैं तो वह भी दुखी होता है (4:15)। वह सब याजकों से अधिक करुणामय है। वह हमें समझता है, क्योंकि चाहे वह निष्पाप था पर उसे

''कुटिल आकर्षणों और जटिल सुझावों का सामना करना पड़ता रहता था।''[13]

5:1-10 के विशाल संदर्भ में इब्रानियों की पुस्तक यीशु की महायाजकाई और उन मुख्य घटनाओं के तथ्य को विस्तार देती है जिसमें इस स्थिति की पुष्टि हुई। बाग में उसका प्रार्थना करना जो क्रूस पर उसकी मृत्यु का चरम था। इब्रानियों 7:1—10:18 उसके याजकाई के काम पर विस्तार से समझाती है। नये नियम की कोई और पुस्तक इतनी स्पष्टता से नहीं बताती कि यीशु महायाजक है।

यीशु परमेश्वर द्वारा चुना और मनुष्य के लाभ के लिए ठहराया गया महायाजक है। स्पष्टतया उसे परमेश्वर का काम करने के लिए परमेश्वर द्वारा चुना गया था और उसने पृथ्वी पर रहते हुए उसके काम को पूरा किया (यूहन्ना 17:4)। वह परमेश्वर द्वारा चुना गया और परमेश्वर द्वारा नियुक्त किया गया था। यहूदी प्रबन्ध बिना महायाजकाई के नहीं चल सकता था क्योंकि यह उस वाचा का आवश्यक भाग था। यह इसलिए भी महत्वपूर्ण था क्योंकि इस पद पर रहने वाला व्यक्ति मसीह के रूप में काम करता था; उसके काम मसीही युग की पूर्व छाया थे।

आयत 3. इसका अर्थ यह है कि महायाजकों के लिए इावश्यक था **कि जैसे लोगों के लिए, वैसे ही अपने लिए भी पाप-बलि चढ़ाया करे।** इब्रानियों की पुस्तक का एक विषय बलिदान भेंट करना है (देखें 5:1)। इब्रानियों की पुस्तक में *prospherō* (''बलिदान चढ़ाना'') बीस बार आता है।[14] क्रिया रूप पौलुस के लेखों में कहीं नहीं मिलता है चाहे उसने मसीह के बलिदान की बात की है। इस अन्तर का कारण हो सकता है कि इब्रानियों की पुस्तक में पुस्तक की अवधारणा अधिकतर याजकों और महायाजक के काम पर लागू होती है, चाहे इन तीनों स्थानों में यह मसीह के कामों के लिए लागू होती है (9:14, 25, 28)।

याजक, और विशेषकर महायाजक ''भेंट और पाप बली'' चढ़ाते थे, विशेषकर प्रायश्चित के दिन। चढ़ाई जाने वाली ''भेंटें'' निर्जीव (तेल के अर्घ और भोजन की भेंटें); ''बलिदान'' मारे गए जानवरों की पशुबलियां होती थीं।[15] याजकाई के स्वभाव में ही बलिदान भेंट करना शामिल था। परन्तु यीशु ने हमारे महायाजक के रूप में काम करते हुए अपने आपको भेंट कर दिया।

हम इस अर्थ में सुसमाचार की सेवा को ''याजक'' नहीं कह सकते क्योंकि वह कोई बलिदान नहीं चढ़ाता और कोई लहू नहीं देता। यह दावा करते हुए कि नियुक्त याजक द्वारा बोले गए शब्दों के द्वारा ''रोटी'' ''सचमुच में यीशु की देह'' बन जाती है रोमन कैथोलिक चर्च का मानना है कि इसके याजक ''मांस के बलिदान'' में बलिदान भेंट करते रहते हैं। परन्तु परमेश्वर के वचन में ऐसा कोई विचार नहीं सिखाया जाता। सुसमाचार के सेवक वचन का प्रचार करते हैं। वे पाप के लिए बलिदान नहीं चढ़ाते हैं, क्योंकि पाप के लिए एक ही बार सदा सदा के लिए हमारे बलिदान के रूप में दे दिया।

अपनी पापपूर्ण कमज़ोरियों के कारण पुराने नियम के याजक लोगों के साथ साथ अपने लिए भी बलिदान चढ़ाते थे। कई प्राचीन यहूदी लेखों में महायाजकों की एक जैसी पोशाक है, परन्तु उसकी असल पोशाक उसकी ''कमज़ोरी'' थी।[16] स्वयं पापी होने के कारण ''अज्ञानी, भूले-भटकों'' पर करुणा कर सकता था (आयत 2)।[17] उसे करुणा की आवश्यकता थी ताकि उसका न्याय अत्यधिक कठोरता से न हो। ''नरमी'' शब्द का अर्थ ''तरस के साथ'' है। यहां इस्तेमाल

होने वाला यूनानी क्रिया शब्द *metriopatheō* है। यूनानियों के लिए इसका अर्थ अत्यधिक क्रोध और उदासीनता यानी सही सही चिंता का आदर्श था।

महायाजक के रूप में चाहे मसीह में कोई निर्मलता नहीं है पर वह हमारी निर्बलताओं में सहानुभूति करता है (4:15; 7:28)। वह "दु:खी पुरुष था, रोग से उसकी जान पहिचान थी" (यशायाह 53:3)। वह हर प्रकार से, विशेषकर करुणा दिखाने में पुराने नियम के महायाजक से बढ़कर था। जैसा कि परमेश्वर की प्रेरणा पाए लेखक ने 2:18 और 4:15 में समझाया है, यीशु ने सचमुच में अज्ञानियों के साथ नरमी से व्यवहार किया।

पुराने नियम के महायाजक के सम्बन्ध में थॉमस हेविड का अनुवाद बिल्कुल सही है: "इसलिए उसके लिए अनुचित कठोरता से बचना आवश्यक है, क्योंकि वह भी उसके दण्ड के अधीन है; परन्तु परमेश्वर के प्रतिनिधि के रूप में, वह बहुत नम्र नहीं हो सकता, क्योंकि पवरमेश्वर पाप को कभी छोड़ता नहीं है।"[18]

अनजाने में किए हुए पापों के लिए व्यवस्था में उपाय था, और जिसे यह मालूम न हो कि उसने पाप किया है, उस पर करुणा की जाती थी (लैव्यव्यवस्था 4:1–12; 5:14–16; 15:27–29)। परन्तु जानबूझकर विद्रोह में पाप करने वाले के लिए कोई वास्तविक उपाय नहीं था (देखें गिनती 14:29–31; 15:30, 31; तुलना इब्रानियों 10:26–29)। अज्ञानी के लिए भी दण्ड था चाहे उन्हें अपने खोए हुए होने की स्थिति पता हो या न (देखें लूका 12:47, 48)। परन्तु "मसीह ने जानबूझकर और अनजाने में दोनों प्रकार के पापों के लिए प्रायश्चित किया।"[19]

"अज्ञानता" से यहूदियों का अर्थ किसी चीज़ को न जानने से बढ़कर था: "उनमें वे पाप शामिल थे, जो बिना जाने किए गए या जो उनकी विशेष प्रकृति की जानकारी के बिना किए गए। उनमें वे पाप भी थे जो जनून के कारण या बड़ी परीक्षा की घड़ी में किए गए हों।"[10]

केवल परमेश्वर ही तय कर सकता है कि कोई पाप "अज्ञानता" से किया गया है या नहीं। हमें यह समझने में कठिनाई हो सकती है कि यहूदियों को जिन्होंने प्रभु के आश्चर्यकर्मों को देखा था "यह जानते नहीं कि क्या कर रहे हैं" की श्रेणी में कैसे रखा जा सकता था (लूका 23:34)। परन्तु यीशु ने उन्हें "अज्ञानी" की श्रेणी में रखा। उन्हें परमेश्वर द्वारा उपलब्ध करवाए गए साधनों के द्वारा भी क्षमा किया जा सकता था। स्वाभाविक है कि मन फिराना आवश्यक था। प्रभु को क्रूस पर चढ़ाने वालों द्वारा यह पूछा जाने पर कि "हे भाइयों, हम क्या करें?" (प्रेरितों 2:36–38) पतरस ने उन्हें यहीं बताया था।

हारून को लोगों के साथ-साथ अपने लिए बलिदान चढ़ाने आवश्यक थे (लैव्यव्यवस्था 9:7; 16:11, 17)। मसीही की श्रेष्ठता इस बात में देखी जाती थी कि उसे अपने पापों के लिए भेंट लाने की आवश्यकता नहीं थी (इब्रानियों 5:3; 7:27), क्योंकि उसने पाप किया ही नहीं था (1 पतरस 2:21, 22; देखें यशायाह 53:9)।

आयत 4. लेखक ने आगे कहा, **यह आदर का पद कोई अपने आप से नहीं लेता जब तक परमेश्वर की ओर से ठहराया न जाए।** महायाजक का ईश्वरीय बुलाहट से चुना जाना आवश्यक था। महायाजक के रूप में यीशु ने परमेश्वर की नियुक्ति को स्वीकार किया। वह अपने आप या मनुष्य के द्वारा नहीं चुना गया था बल्कि वह परमेश्वर द्वारा चुना गया था।

इस विचार में उस समय के नकली महायाजकों को थोड़ी सी डांट हो सकती है, जिन्हें

अधिकतर हेरोदेस द्वारा या रोमी अधिकारियों द्वारा चुना जाता था।[11] कई बार वे पद को पाने के लिए घूस का इस्तेमाल करते थे और कई तो अपने भ्रष्टाचार के लिए प्रसिद्ध थे। आरम्भिक दिनों के असल महायाजकों में ऐसा नहीं था। कइयों ने तो बड़े साहस और निष्ठा को दिखाया था, जैसे एब्यातार ने दाऊद की सहायता करके किया था (1 शमूएल 23:9-14)। इस श्रेणी के जनक हारून को कम से कम मूसा के साथ उसके सम्बन्ध के अलावा उसके अच्छे गुण के कारण चुना गया हो सकता है।

परमेश्वर द्वारा महायाजक के चुने जाने और स्वीकार किए जाने को याजकों के रूप में सेवा करने के इच्छुक अयोग्य लोगों को दण्ड देने के द्वारा ज़ोरदार ढंग से सिखाया जाता था। गिनती 16:1-35 तीन जनों की बात बताता है जिन्होंने याजकों के रूप में कार्य करने की कोशिश की थी और उन्हें कठोर दण्ड दिया था। शाऊल ने याजक के रूप में काम करने के लिए अपने आपको ''जबर्दस्ती'' बनाने का दावा किया था (1 शमूएल 13:12), अन्त में उसने अपने प्राण और अपने राज्य की हानि देकर इसकी कीमती चुकाई। उज्जियाह राजा ने मन्दिर में धूप जलाने की कोशिश की और उसे कोढ़ के साथ दण्ड दिया गया (2 इतिहास 26:16-21)।

''परमेश्वर द्वारा बुलाए'' जाने की शर्त का प्रचारकों या कलीसिया में ऐल्डरों के चुने जाने से कोई सम्बन्ध नहीं है। इसका आज बहुत से लोगों द्वारा दावा की जाने वाली किसी ''अन्दर से लगा कि बुलाहट हुई है'' के साथ भी कोई सम्बन्ध नहीं है। प्रेरितों के दिनों में प्राचीनों और सुसमाचार प्रचारकों को पवित्र आत्मा द्वारा सीधे चुनकर नियुक्त किया जा सकता था, जिसका सुझाव प्रेरितों 20:28 में मिल सकता है (प्रेरितों 6:1-7; 13:1-3 भी देखें)।[12] प्राचीनों की योग्यता 1 तीमुथियुस 3:1-7 और तीतुस 1:5-9 में दर्ज की गई हैं। जब लोग आत्मा की दी हुई शर्तों को पूरा कर लेते तो उन्हें इस पद के लिए ठहराया जाता था। यही बात आज कलीसिया में मानी जानी आवश्यक है।

हारून की महायाजकाई के साथ मसीह की याजकाई की तुलना किसी भी मानवीय याजक पर मसीह की सेवकाई की उत्तमता और श्रेष्ठता को दिखाने के लिए आवश्यक थी। वह हमारा मध्यस्थ, हमारी स्वर्गीय सहानुभूति रखने वाला, पाप के लिए हमारा अन्तिम बलिदान और हमारी सेवा के लिए परमेश्वर द्वारा ठहराया हुआ है। आइए उसका जो हमें मिला है, आनन्द लें और अपने विश्वास के अंगीकार को थामे रखें।

हमारा महायाजक होने के लिए मसीह की योग्यताएं (5:5-10)

5वैसे ही मसीह ने भी महायाजक बनने की बढ़ाई अपने आप से नहीं ली, पर उस को उसी ने दी, जिसने उससे कहा था,

''तू मेरा पुत्र है,
आज मैं ही ने तुझे उत्पन्न किया है।''

6इसी प्रकार वह दूसरी जगह में भी कहता है,

''तू मलिकिसिदक की रीति पर सदा के लिए याजक है।''

[7]यीशु ने अपनी देह में रहने के दिनों में ऊंचे शब्द से पुकार-पुकार कर, और आंसू बहा बहाकर उससे जो उस को मृत्यु से बचा सकता था, प्रार्थनाएं और विनती की और भक्ति के कारण उस की सुनी गई। [8]पुत्र होने पर भी, उसने दुख उठा उठाकर आज्ञा माननी सीखी। [9]और सिद्ध बनकर, अपने सब आज्ञा मानने वालों के लिए सदा काल के उद्धार का कारण हो गया। [10]और उसे परमेश्वर की ओर से मलिकिसिदक की रीति पर महायाजक का पद मिला।

5:5-10 में मसीह की महानता की ऐसी बात मिलती है जो पवित्र शास्त्र में कहीं और देखने को नहीं मिलती। आइए इस तस्वीर को ध्यान से देखकर उसे समझने की कोशिश करते हैं।

आयत 5. पहली सच्चाई जो हम देखते हैं वह यह है कि **मसीह ने बढ़ाई अपने आप से नहीं ली।** यह गारंटी देकर कि ''मसीह ने बढ़ाई अपने आप से नहीं ली'' लेखक शायद याजकों के एक और चलाकी को दिखा रहा था जिन्होंने हाल ही में राजनैतिक प्रभाव से अपनी नियुक्ति की थी या अपनी नियुक्ति का प्रबन्ध किया था।

आयतें 4 और 5 में हमें ''बढ़ाई'' और ''आदर'' में अन्तर दिखाई देता है। लेखक ने कहा कि ''आदर'' (आयत 4) महायाजक को दिया जाता था, परन्तु ''बढ़ाई'' मसीह को दी गई (आयत 5)। दोनों शब्द चाहे एक दूसरे के पर्यायवाची होते हैं परन्तु ''बढ़ाई'' ''आदर'' से बढ़कर है। ''बढ़ाई'' पाने में व्यक्ति ईश्वरीय उपस्थिति में प्रवेश करके ''आदर'' से आगे निकल जाता है, जो कि मसीह का एक तथ्य है जिसे उसके ऊंचा किए जाने के द्वारा किया गया। बहुत से यहूदी यीशु को राजा होने का दावा करने वाला मानते होंगे। परन्तु विश्वासियों के लिए वह मसीहा अर्थात दाऊद का पुत्र था।

आयत 5 में ''मसीह'' या ''अभिषिक्त'' का इस्तेमाल पद की उसकी विशेष नियुक्ति का सुझाव देने के लिए किया गया है। स्पष्टतया कहने का भाव एक ही ''अभिषिक्त'' (मसीह) है। कुछ यहूदी दो मसीहों के आने का अनुमान लगाते थे, एक जिसने राजा बनना था और दूसरा जिसने याजक के रूप में सेवा करनी थी।[13] परन्तु मसीह के पास राजा और याजक के दोनों पद हैं।

इब्रानियों 1:5 में भजन संहिता 2:7 के उद्धरण **''तू मेरा पुत्र है, आज मैं ही ने तुझे उत्पन्न किया है''** का इस्तेमाल मसीह के पुत्र होने को दिखाने के लिए किया गया। यह संकेत देने के लिए कि उसे अपने ऊंचे पद पर परमेश्वर की ओर से नियुक्त किया गया था, हमें 5:5 में वही उद्धरण मिलता है। यूहन्ना 8:42 में यीशु ने दावा किया कि पिता ने उसका आदर किया। उसने अपनी महिमा नहीं चाही थी, न ही उसे अपने आपको ऊंचा करने की कोई आवश्यकता थी। वह स्वर्ग में रहकर बढ़ाई और आदर को बनाए रखता था, परन्तु उसने पृथ्वी की कंगाली और निर्बल मानवीय देह को धारण करने के लिए दीनता से उस निवास को त्याग दिया (फिलिप्पियों 2:5-11)। मसीह का पुत्र होना लूका 3:38 में आदम के पुत्र होने से बढ़कर है क्योंकि वह ईश्वरीय पुत्र है क्योंकि आदम केवल मनुष्य और भूलचूक से भरा था। आदम ने पाप करना चुना और सब की मृत्यु का कारण बन गया; मसीह ने आज्ञा मानना चुना और सब के लिए जो उसे

ग्रहण करता है, अनन्त जीवन देने वाला बन गया।

आयत 6. उसी आवाज जिसमें यीशु के पुत्र होने की घोषणा की थी उसे **मलिकिसिदक की रीति पर सदा के लिए याजक** के रूप में भी माना। यह आयत भजन संहिता 110:4 के कथन पर आधारित है। इब्रानियों में पहली बार मसीहा की याजकाई के मलिकिसिदक की याजकाई की अवधारणा से मिलाया गया है। मसीह को मलिकिसिदक की रीति के अनुसार चुना गया था। उसे याजक के रूप में उपयुक्त होने के लिए कोई अभियान चलाने की आवश्यकता नहीं थी।

आयतें 5 और 6 में वास्तव में भजन संहिता से तीन उद्धरण हैं। भजन संहिता 110:1 जो कहता है, ''मेरे प्रभु से यहोवा की वाणी यह है, 'तू मेरे दहिने हाथ बैठ, जब तक कि मैं तेरे शत्रुओं को तेरे चरणों की चौकी न कर दूं।' '' रोमियों 2:7 और 110:4 के उद्धरणों की बीच पुल का काम करता है। आरम्भिक कलीसिया आम तौर पर मसीह के ऊपर उठाए जाने और महिमा पाने के सम्बन्ध में भजन संहिता 110:1 का इस्तेमाल करती थी। परन्तु यह विलक्षण पुत्र और याजक जिसकी प्रतीक्षा की जा रही थी, दोनों एक ही हैं। ''वह भी कहता है'' (आयत 6) में ''वह'' स्पष्ट रूप में परमेश्वर है और उसे अधिकार के साथ उद्धृत किया गया है। मसीही लोगों द्वारा प्रमाण के वचन के रूप में भजन संहिता 110 का इस्तेमाल बार बार किया जाता था और यहूदियों द्वारा इसे मसीहा के भजन के रूप में आम तौर पर माना जाता होगा।[14] परन्तु लगता है कि इब्रानियों का लेखक ''पुत्र'' और मलिकिसिदक की याजकाई को मसीह से जोड़ने वाला पहला व्यक्ति है।[15]

''सदा के लिए'' का संकेत सिद्धता के लिए है जिसमें सुधार नहीं हो सकता। इसलिए हारून की पुरानी याजकाई की तरह मसीह की याजकाई को बदलना नहीं जाएगा। पुराने नियम में ''सदा के लिए'' शब्द का अर्थ आम तौर पर ''थोड़ी देर तक'' होता है। निर्गमन 12:14 संकेत देता है कि फसह ''सदा'' रहना था (KJV)। बाद में सब्त को भी सदा तक रहने की बात कही गई (निर्गमन 31:16, 17; KJV)। हारून की याजकाई ''सदा की'' थी (KJV) थी। परन्तु यह शब्द ''उनकी पीढ़ी पीढ़ी के लिए'' अभिव्यक्ति से पूरा होता है (निर्गमन 40:15)।[16] मसीह की याजकाई पूरे मसीही युग तक रहती है। फिर वह राज्य को पिता को लौटा देगा। उसके बाद ऐसा लगता नहीं है कि वह पिता के सामने हमारे लिए विनती करता रहेगा (1 कुरिन्थियों 15:24–28)। निश्चय ही मसीह की महायाजकाई और राजा के रूप में मध्यस्थता वाले शासन की तब कोई आवश्यकता नहीं होगी। स्वर्ग में कोई पाप नहीं होगा जिस कारण हमें पाप बलि या अपने लिए यीशु की सिफ़ारिश की कोई आवश्यकता नहीं होगी (प्रकाशितवाक्य 21:27; इब्रानियों 7:25)।

आयत 7. मसीह जब पृथ्वी पर था, **ऊंचे शब्द से पुकार पुकाकर और आंसू बहा बहाकर प्रार्थनाएं और विनती** करता था। 5:5–10 में मसीह की महानता के एक चित्रण की दूसरी सच्चाई यह है कि उसने शक्ति के साथ प्रार्थना की। 4:14–16 में मसीही लोगों से प्रार्थना करने को कहा गया है। आयत 7 हमें प्रार्थना करने का श्रेष्ठ उदाहरण देती है। मसीह ने चाहे हमारी ओर से अपना प्राण दे दिया पर उसने अपने लिए ये प्रार्थनाएं की। इसमें इस प्रश्न का उत्तर मिलने लगता है कि ''क्या उसे हम पापियों पर तरस आता है?'' ''मांस और लहू'' स्वर्ग में

प्रवेश नहीं कर सकते (1 कुरिन्थियों 15:50) और मसीह की महिमा पाई हुई देह अब मांस की उस निर्बलता और कमज़ोरी से मुक्त है, जो पृथ्वी पर थी (फिलिप्पियों 3:21)। अब वह स्वर्ग में अपने सारे दुखों और कष्टों को पीछे छोड़ अभी भी हमारे लिए ''महसूस'' कैसे करा सकता है? उत्तर यह है कि उसे अब भी पूरी तहर अपने जीवन की वह सबसे परीक्षा वाली रात याद है जब उसका पसीना बहा था जो ''लहू की बड़ी बड़ी बूंदों के समान भूमि पर'' गिरा था (लूका 22:44)। आयत 7 गतसमनी में उसके दुख सहने की बात करती होगी जहां सारी मनुष्यजाति की ओर से अपनी मृत्यु की तैयारी करते हुए उसने असली संताप सहा। वह मनुष्यों के बीच मनुष्य बनकर रहा और उन दिनों की याद को पूरी तरह से बरकरार रखता है।

प्रिय और करुणामय वैद्य लूका ने मसीह के वहां के अनुभव के लिए गतसमनी में दुखस सहने का वर्णन ''वेदना'' (*agōnia*; 22:44) शब्द के साथ किया। मसीह के अनुभव में *agonia* शब्द का इस्तेमाल केवल यहीं हुआ है, जो क्रूस के सम्बन्ध में नहीं मिलता है, थॉमस हेविट ने कहा है, ''संसार के उद्धारकर्त्ता की बड़ी वेदना इस जीवन में हमारे लिए एक रहस्य ही रही, और उसके दुख सहने के और भी कई पहलू ऐसे ही हैं।''[17] शायद यह सच है, परन्तु उस रात बाग में उसकी प्रार्थनाओं पर कुछ विचारों का हम पता लगाएंगे।

1. डर के कारण यीशु ने जब प्रार्थना की तो उसने परमेश्वर की योजना के आगे अपने आपको दे दिया। यीशु को बाद में डर लगा था, परन्तु वह इससे लज्जित नहीं हुआ था। उसका डरना उसे हमारे प्रति और सहानुभूति रखने वाला बना देता है। हम अपनी ओर से ऐसी वेदना सहने की उसकी स्वेच्छा से बहुत प्रभावित हो जाते हैं। मृत्यु का ''कटोरा'' यीशु से हटाया नहीं गया था चाहे परमेश्वर ने बाग में उसकी प्रार्थना का उत्तर दे दिया था।[18] यीशु ने पतरस को संकेत दिया था कि आवश्यक है कि मैं इसे ''पीऊं'' (यूहन्ना 18:11) और वह इसे पीने को तैयार भी था। परन्तु बाग में अपनी मृत्यु के बिल्कुल निकट वह ''बड़ा उदास'' था। स्वर्ग से एक दूत ने उसे सामर्थ दी (मत्ती 26:38; लूका 22:43)। गतसमनी में उसका दुख सहना और यह तथ्य कि मृत्यु का उसका ''कटोरा'' नहीं हटा, उसे हमारे साथ सहानुभूति करने के और भी योग्य बना देता है, जब लगता है कि हमारी प्रार्थनाओं का उत्तर नहीं मिला या हम बता नहीं सकते कि हमारी परीक्षाओं का भेद क्या है।

आयत 7 कहती है कि **भक्ति के कारण उसकी सुनी गई**। कुछ अनुवादों में ''भक्ति'' के स्थान पर ''भय'' (KJV) या ''परमेश्वर भक्ति का भय'' (ASV) है। यहां इस्तेमाल हुआ शब्द आम शब्द *phobos* नहीं है बल्कि नये नियम में केवल इब्रानियों की पुस्तक में इस्तेमाल होने वाला शब्द *eulabeia* है। (देखें 12:28, जहां इसका अनुवाद ''भय'' हुआ है।)

भक्तिपूर्ण भय जिससे उसका मन भरा था केवल मृत्यु के भय के कारण नहीं हो सकता था; यदि ऐसा होता तो निश्चय ही और पवित्र लोग उससे अधिक साहस के साथ मरते। उसका भय ''भक्तिपूर्ण भय'' था जिसका अर्थ अपने पिता को पूर्ण समर्पण है। इस शब्द का अर्थ ''चिंता'' भी हो सकता है। जेम्स थॉमसन ने लिखा है, ''चिंता के अर्थ में समझने पर इस कथन का अर्थ है कि यीशु का विशेष भय मृत्यु का भय था और यह कि जब उससे उसकी सुनी गई, तो वह इस भय पर काबू पा सका था।''[19] रेमण्ड ब्राउन का अवलोकन है, ''व्याकरणी रूप में आयत 7 का अनुवाद करना सम्भव है: 'और भय से मुक्त होने पर सुनी गई।' ''[20] इस आयत की यह

समझ होने से हमारी चिंताओं के वैसे ही हट जाने की सम्भावना का सिद्ध उदाहरण बन जाता है जैसे पौलुस ने फिलिप्पियों 4:4–7 में बताया। थोड़ी देर की चिंता जिसने लगभग उसे दबा लिया था, परमेश्वर पिता की ओर मोड़ दी गई और जल्द ही यह दूर हो गई।

पाप के बोझ के साथ मरना एक बड़ी ज़िम्मेदारी थी और मनुष्यजाति के लिए वह यही करने जा रहा था। उसकी मृत्यु, चाहे वह अपने मानवीय रूप में प्रभु के लिए थी, एक बहुत बड़ा कार्य था। परीक्षा और प्रलोभन का सामना करने की उसकी पूरी क्षमता को उसके क्रूस पर पहुंचने से पहले ही परख लिया गया था।

यदि उसका "भय" क्रूस पर उसके आने से पहले बाग में उसकी मृत्यु पर केन्द्रित था तो इसका अर्थ यह है कि वह हमारे पापों के बलिदान के रूप में क्रूस पर पिता की इच्छा को पूरी करने से पहले मर सकता था। मत्ती 26:38 में याद करें कि उसने कहा था, "मेरा जी बहुत उदास है, यहां तक कि प्राण निकला जा रहा है।" यीशु को अपनी हालत अच्छी तरह पता थी और उसने इसमें से निकलने की अपने पिता से विनती की।

2. अकेला महसूस होने पर जब यीशु ने प्रार्थना की तो उसके ध्यान में दूसरे लोग थे। यीशु क्रूस पर परीक्षा का सामना करने के लिए अपने पिता के साथ अकेला रहना स्वीकार कर सकता था (मरकुस 15:34; भजन संहिता 22:1 से लिया गया)। उसने इसे पीड़ा में चीखे बिना, कम से कम ऐसी चीख जिसके बारे में लिखा नहीं गया है, के बिना इसे सहा। इसके विपरीत दूसरों की आवश्यकता के लिए अपनी चिंता को दिखाया। उसने मर रहे डाकू को आश्वासन दिया और पिता से विनती की, "हे पिता, इन्हें क्षमा कर, क्योंकि ये जानते नहीं कि क्या कर रहे हैं?" (लूका 23:34, 43)।

हमें भी इसी प्रकार से विश्वास और प्रार्थना से परमेश्वर को अपने समय में काम करने, हमारी चिंताओं को दूर करने देकर सहना आवश्यक है। दुख उसका भाग है जो सारी मनुष्यजाति को सहना आवश्यक है। मसीह ने जंगल में परखे जाने के समय अपनी भूख को मिटाने के लिए आश्चर्यकर्म का इस्तेमाल करने से इनकार कर दिया था और उसने शत्रुओं से जिन्होंने उसे क्रूस पर कीलों से ठोकना था, अपने बचाव के लिए स्वर्गदूतों को बुलाने से इनकार कर दिया था।

3. यीशु की प्रार्थना का उत्तर मिल जाने पर उसे सामर्थ मिल गई। यीशु की तेज़ पुकार "सुनी गई।" यीशु आम तौर पर रोता था, जैसे वह यरूशलेम के लिए रोया था (लूका 19:41)। वह यह जानते हुए कि शीघ्र ही वह लाज़र को मुर्दों में से जिला देगा, उसकी कब्र पर रोया था (यूहन्ना 11:35)। बाग में यीशु का उतारना हमारी प्रकृति की उसे समझ का प्रमाण है। उसका रोना सामर्थ से भरा था। उसकी प्रार्थना के उत्तर उसे क्रूस पर अपनी देह में मनुष्यजाति के लिए दुख सहने और मरने के योग्य बना दिया (2 कुरिन्थियों 5:19–21)।

यीशु की सुनी गई थी, क्योंकि उसे स्वर्गदूत की सहायता से उत्तर दिया गया था और वेदना भरी प्रार्थना को सहने की शक्ति दी गई थी, जिससे वह अपनी चिंता या भय पर काबू पा सका। फिर वह स्वेच्छा से हमारे लिए क्रूस की ओर चला गया। "सुनी गई" का अर्थ है कि उसकी प्रार्थना का उत्तर दिया गया था।[21] स्वर्गदूत पहले उसकी आरम्भिक याचना के तुरन्त बाद (लूका 22:43) और उसके बाद उसकी प्रार्थना हुई जिसमें उसका पसीना मानों लहू की बूंदों की तरह बह रहा था (लूका 22:44)। मरकुस ने इस अवसर पर यीशु को "बहुत ही अधीन और

व्याकुल'' होते बताया है (मरकुस 14:33)। NEB में कहा गया है, ''मेरा दिल दुख से टूटने को है।'' लगता है कि यह भजन संहिता 69:20 की मसीहा की भविष्यद्वाणी की मूल व्याख्या देता है: ''मेरा हृदय नामधराई के कारण फट गया, और मैं बहुत उदास हूं।'' ''इंद्रायन'' और ''सिरका'' से सम्बन्धित भविष्यद्वाणी भजन संहिता 69:21 को सुसमाचार के विवरणों में वैसे ही पूरी होते हुए दिखाया गया है, तो हम आयत 20 को वैसे ही समझने में क्यों हिचकते हैं? गतसमनी के दुख उठाने ने यीशु को इतना कमज़ोर कर दिया कि वह क्रूस पर हृदय के फटने से मर गया होगा। कोई आश्चर्य नहीं कि गुलगता को जाते हुए वह क्रूस के बोझ के नीचे गिरा होगा। कोई आश्चर्य नहीं कि वह उन अपराधियों के मुकाबले जो उसके साथ क्रूस पर चढ़ाए गए थे, कलवरी पर इतनी जल्दी क्यों मर गया! यहां पर उसकी कमज़ोरी के कारण सिपाही और भीड़ के लोग उसे और ठट्ठा करने लगे होंगे! उन्हें यह समझ नहीं आया होगा कि इतना कमज़ोर व्यक्ति उनका राजा कैसे बन सकता है! बाग में रोते हुए अपनी प्रार्थना और उसके उत्तर के बाद सामर्थ पाकर यीशु रात भर की पेशियों और अगले दिन की लज्जा से बिना बुड़बुड़ाए या शिकायत किए गुज़र सका। वास्तव में उसने उनके लिए प्रार्थना की जिन्होंने उसे नमस्कार किया था! बाद में उसे नये सिरे से ''वह शांति जो समझ से परे है'' मिली। उसने दृढ़ता से यहूदा और भीड़ का सामना किया था।

क्रूस के लिए तैयार करते हुए यीशु ने क्या सहा? रे सी. स्टैडमैन ने इसका स्पष्ट चित्रण किया है:

> लेखक के कहने का अभिप्राय है कि यीशु ने पाप से होने वाले भावनात्मक दुख अर्थात इसकी लज्जा, दोष और निराशा का सामना किया। उसने पाप की दास बनाने वाली शक्ति की कड़ियां महिसूस कीं। उसे निराशा के बोध से, पूर्ण निराशा और अत्यन्त पराजय से दबाया गया। वह क्रूस पर उस पल की राह देख रहा है जब उसने पिता का त्यागा हुआ हो जाना था, क्योंकि उसने संसार के पाप को *ऐसे जैसे उसके अपने हों* उठाना था। इस विचार ने ही उसके हृदय को ऐसे पीस दिया जैसे कोल्हू में हो।[22]

हम उसे वेदना में से पूरी तरह जाने की कल्पना नहीं कर सकते हैं जो यीशु ने सही थीं। उसने अपनी ''भक्तिपूर्ण समर्पण'' (आयत 7; NIV) के कारण तब बिना मरे बाद में उस लगभग दबा देने वाली घटना को सहा था। अपनी अत्यंत तेज़ पुकार के साथ जिसे कोई भी प्रेमी पिता सह नहीं सकता उसके पिता की योजना के सामने अपने आपको दे देने की सम्पूर्ण इच्छा के कारण यीशु की प्रार्थना का उत्तर दिया गया। उसकी प्रार्थना का उत्तर ''हां'' में मिला। वह अपनी रक्षा के लिए स्वर्गदूतों की बारह पलटन बुला सकता था, परन्तु पवित्र शास्त्र का पूरा होना आवश्यक था (मत्ती 26:53, 54; देखें लूका 24:44–48)। इससे पूरी तरह से अवगत वह क्रूस पर जाने को तैयार था।

4. जब हम मसीह की तरह प्रार्थना करते हैं तो हमारी सुनी जाएगी। यीशु का ''ज़ोर से पुकारना'' सुना गया था, तो क्या हमें भी अपने दुख के द्वारा सीखने तक अपनी आंसू भरी प्रार्थनाओं के उत्तर मिलने का कोई आश्वासन मिला है? आंसुओं में परमेश्वर के सामने भी इतनी सामर्थ है जितनी और किसी में नहीं। बी. डब्ल्यू. एफ़. वेस्टकोट ने एक पुरानी यहूदी कहावत बताई है: ''कोई ऐसा दरवाज़ा नहीं जिसमें से आंसू न गुज़रते हों।''[23] वे हर घर में मिल जाते हैं

और परमेश्वर उनकी सुनता है। प्रार्थना करें कि हम हर चुनौती का मुकाबला करें और परमेश्वर की दया से इसे सहन करें। याद रखें कि दूसरों के लिए हमारी प्रार्थनाएं, गहरे दुख में होने पर भी, अवश्य सुनी जाएंगी और उनका उत्तर मिलेगा।

हम यह उम्मीद न करें कि हमें मृत्यु से आश्चर्यकर्म के द्वारा छुटकारा मिल जाएगा जबकि इससे बचने के लिए हमारे प्रभु ने भी अलौकिक शक्ति का इस्तेमाल नहीं किया! केवल इसी के द्वारा उसने मनुष्य के उद्धार के लिए परमेश्वर की उदारता को साबित किया। जो कुछ मसीह ने हमारे लिए किया है, उनके कारण हम बड़े संकट से बच जाते हैं। उन कुछ महिमामय लाभों की समीक्षा, जो हमें यीशु की स्वेच्छा से समर्पण के कारण मिलते हैं:

> प्रायश्चित के मसीह के काम और मृत्यु और कब्र पर उसकी विजय के कारण हमें पाप के बोझ, श्राप की प्रचण्डता, न्याय के दण्ड या अनन्त मृत्यु और नरक के अर्थ का पता कभी नहीं चलेगा। हमें हमारे महायाजक यीशु के कारण दोषमुक्त और स्वतन्त्र कर दिया गया है।[24]

आयत 8. 5:5–10 में मसीह की महानता के चित्रण में उसकी तीसरी सच्चाई यह है कि उसने **पुत्र होने पर भी उसने आज्ञा माननी सीखी।** यह सुनना अजीब लगता है कि मसीह को आज्ञा मानना सीखना पड़ा! इसका अर्थ अवश्य नहीं है कि यह हो कि वह किसी भी समय विद्रोही था। एक बच्चे के रूप में भी वह हर बात में आज्ञाकारी था (लूका 2:51)। उसने कहा, "मेरा भोजन यह है कि अपने भेजने वाले की इच्छा के अनुसार चलूं और उसका काम पूरा करूं" (यूहन्ना 4:34)। उसने पिता से प्रार्थना की, "जो काम तू ने मुझे करने को दिया था, उसे पूरा करके मैं ने पृथ्वी पर तेरी महिमा की है" (यूहन्ना 17:4)। वह हमेशा आज्ञाकार था और अपने स्वर्गीय पिता की इच्छा को ही पूरा करना चाहता था। तो फिर उसे आज्ञा मानना सीखना क्यों पड़ा?

डब्ल्यू. एच. ग्रिफिथ थॉमस ने कहा है, "यह भोला होने और शरीफ़ होने के बीच का अन्तर है। भोला अनुभवहीन है परन्तु शरीफ़ परखा गया और विजयी ठहरने वाला भोला है।"[25] मसीह आज्ञा मानने की *स्थिति* में रहता था, परन्तु आज्ञा मानने का *गुण* होने के लिए परखा जाना आवश्यक था। मसीह का आज्ञा मानना यहां तक रहा कि उसने "मृत्यु हां, क्रूस की मृत्यु भी सह ली" (फिलिप्पियों 2:8)।

थोड़ा अलग विचार यह है:

> यीशु ने सीखा कि परमेश्वर की आज्ञा मानने में क्या क्या बाते हो सकती है, और उसने यहां पृथ्वी पर मानवीय जीवन की शर्तों में आज्ञा मानना सीखा। मत्ती 26:53 को ध्यान में रखते हुए जो कुछ यीशु के आज्ञा मानने में आवश्यक था उसी से कुछ सीखा जा सकता है।[26]

वह अपने आपको क्रूस से छुड़वाने के लिए स्वर्गदूतों की बारह पलटने बुला सकता था परन्तु वह उसके पिता की इच्छा की आज्ञा मानना नहीं होता था। पिता के सामने उसके आज्ञा मानने की सबसे बड़ी महिमा गतसमनी में दिखाई गई, जहां उसके आज्ञा मानने को पूरी तरह से देखा गया।

''उसने **दुख उठा उठाकर** आज्ञा माननी सीखी।'' मसीह का दुख उठाना क्रूस की पीड़ा से और उसके शत्रुओं द्वारा उस पर लगाए गए ठट्ठे के ढेर से बढ़ गया। इब्रानियों के लेखक के मन में यशायाह 50:4, 5 वाली मसीहा की भविष्यद्वाणी ही होगी:

> प्रभुयहोवानेमुझेसीखनेवालोंकीजीभदीहैकिमैंथकेहुएकोअपनेवचनकेद्वारासंभालनाजानूं।
> भोर को वह नित मुझे जगाता और मेरा कान खोलता है कि मैं शिष्य के समान सुनूं।
> प्रभु यहोवा ने मेरा कान खोला है,
> और मैं ने विरोध न किया, न पीछे हटा।

''पुत्र'' के लिए दुख उठाना आवश्यक था इसलिए हम उम्मीद कर सकते हैं कि परमेश्वर के सब ''पुत्रों'' को वैसे ही दुख उठाना आवश्यक है (इब्रानियों 12:5–11)।[27]

आयत 9. आज्ञा मानने के द्वारा यीशु **सिद्ध** या ''सम्पूर्ण'' **बन** गया। जिससे याजकाई के लिए हर आवश्यक योग्यता उसमें आ गई। ''सिद्ध'' शब्द का अर्थ यह नहीं है कि उसने नैतिक सिद्धता यहां पर प्राप्त की, बल्कि यह है कि उसके विनम्रतापूर्वक दुख सहने को तैयार होने ने उसे हमारा उद्धारकर्त्ता बनाने के लिए, पूरी तरह से योग्य बना दिया।[28] यह कभी नहीं कहा जा सकता था कि कोई मानवीय याजक ''सिद्ध बने।''[29] मसीह ने पूरी तरह से मानवीय स्वभाव को अपनाया, परन्तु उसने पूरी तरह से मनुष्यजाति के लाभ के लिए परमेश्वर की इच्छा के आगे समर्पण कर दिया। इसलिए वह आज्ञा मानने के कारण ''सम्पूर्ण'' था और अपने दुख उठाने के बाद उसे मुकुट दिया गया। अब वह परमेश्वर के दाहिने हाथ राज करता है। उसका सीखना ''केवल इस अर्थ में था कि यीशु का दुख उठाना महायाजक के रूप में उसकी योग्यता का आधार (तुलना 2:17; 4:14) और मनुष्य के उसके लाभों का आधार है। ...''[30]

परन्तु वह केवल **अपने आज्ञा मानने वालों** का उद्धारकर्त्ता है। यहां हर किसी के उद्धार कोई संकेत नहीं है! वास्तव में यह आयत इस विचार पर पानी फेर देती है। उद्धार पाने के लिए हमारे लिए सुसमाचार की आज्ञा को मनना आवश्यक है (1 पतरस 4:17; 2 थिस्सलुनीकियों 1:7–9)। मसीही व्यक्ति के लिए पिता की इच्छा को मानते रहना आवश्यक है (मत्ती 7:21) यह अजीब है कि इतने टीकाकार ''अनुग्रह को पाने के लिए आज्ञा मानना कोई पूर्व शर्त नहीं है, बल्कि विश्वास की यात्रा पर चलने वालों की विशेषता है'' जैसी बातें कहते हैं।[31] क्या यह उसके सीधा विरोध में नहीं है जो इब्रानियों के लेखक ने कहा है? निश्चय ही विश्वास करने वाले के जीवन में आज्ञा मानना होगा ही, परन्तु यह आज भी सच है कि मसीह केवल आज्ञा मानने वालों का ही उद्धार करता है! जिस प्रकार से मसीह ने आज्ञा मानी वैसे ही हमें भी परमेश्वर की हर आज्ञा को, चाहे वह हमें पसन्द हो या न या हमें समझ आए या न, मानने को तैयार रहना आवश्यक है।

केवल मसीह ही है, जो परमेश्वर मनुष्य है, जो संसार के उद्धार को सम्भव बनाता है। वह **सदाकाल के उद्धार का कारण** [*aitios*] यह शब्द दूसरों के चलने के लिए निशान बनाने वाले ''पथप्रदर्शक'' के लिए हो सकता है। यीशु ने यही किया।[32] उद्धार और किसी में नहीं मिलता (प्रेरितों 4:12)।

उद्धार आज्ञा मानने के द्वारा मिला, बताया जाता है। तो इसका क्या अर्थ है कि उनका क्या

होगा जो सुसमाचार की आज्ञा नहीं मानते हैं। 1 पतरस 4:17 में पतरस ने यह अलंकारिक प्रश्न पूछा था। इस प्रश्न का उत्तर स्पष्ट है और 2 थिस्सलुनीकियों 1:8–10 में पौलुस ने इसका उत्तर दिया था। जो "सुसमाचार को नहीं मानते उन से पलटा" लिया जाएगा। उद्धार केवल बातें करने वालों और उसकी आज्ञा मानने की प्रार्थना करने वालों के लिए नहीं है (मत्ती 7:21–23)। स्वेच्छा से अधीन होकर आज्ञा मानना हो सकता है कि तुरन्त न हो, जैसा कि कुछ लोग गर्व से दावा करते हैं; इसके बजाय यह समय के साथ आत्मिक उन्नति के साथ होता है (2 पतरस 1:5–11)। यीशु के जीवन से आज्ञाकारिता में बने रहने को दिखाया गया। संकट के समय किसी के जीवन में कोई अचनाक बदलाव हो सकता है परन्तु जो कुछ यीशु ने प्राप्त किया है वह हमें तभी मिल सकता है जब हम भी दृढ़ता से आज्ञापालन करें।[33]

आयत 10. 5:5–10 में मसीह की महानता के चित्रण में उसकी चौथी सच्चाई यह है कि उसे **महायाजक का पद मिला**। लेखक **मलिकिसिदक** की याजकाई की धारणा में लौट आया जिससे आयत 6 में आरम्भ किया गया था। फिर उसने भजन संहिता 110 की बात की, जिसे 1:3, 13; 6:20; 7:3; 8:1; और 10:12, 13 में भी उद्धृत किया गया है। यदि इब्रानियों की पुस्तक मुख्य वचन है तो यह भजन संहिता 110:1 ही होना चाहिए जो कहता है, "तू मेरे दाहिने हाथ बैठ, जब तक मैं तेरे शत्रुओं को तेरे चरणों की चौकी न कर दूं।"

मसीह को हमारे महायाजक का "पद" (*prosagoreuō*) मिला है। "पद" एक और शब्द है जिसका इस्तेमाल नये नियम में केवल यहीं हुआ है। यह केवल परमेश्वर द्वारा की गई "घोषणा" या "कथन" है। याजकों को भी परमेश्वर द्वारा ही ठहराया जाता था नहीं तो उनकी सेवा का कोई महत्व नहीं होता था।

हमारे महायाजक के लिए ठहराई गई हर योग्यता को मसीह में पूरा किया गया है। उसे सीधे परमेश्वर द्वारा नियुक्त किया गया है। पुत्र के रूप में उसका पद सामान्य लोगों या याजकों से ऊपर है, जो स्वयं पाप करते हैं (5:3)। उसने मानवीय परीक्षाओं को सहा, जिससे वह मनुष्यों को समझने के योग्य हो गया (आयतें 7, 8)। अन्त में अपने स्वयं के आज्ञापालन के द्वारा उसने सीखा कि परमेश्वर के नियमों का कड़ाई से पालन करना आवश्यक है (आयतें 8, 9)।

यीशु के "सदा के लिए" याजक होने में दिखाए गए परमेश्वर के विचार (5:6) का अर्थ था कि हारून का प्रबन्ध बेकार हो चुका था। पुराने प्रबन्ध का मिट जाना किसी यहूदी के मानने के लिए सबसे कठिन सच्चाइयों में से था–उन लोगों के लिए भी जो मसीह को राजा मानते थे। इसके लिए अपने पिछले जीवन और उस आधार को त्याग देना आवश्यक था जिस पर वह अपने आपको परमेश्वर के सामने पवित्र मानता था। उसे अनदेखे के लिए दिखाई देने वाले को अर्थात अदृश्य के लिए ज़ाहिर को छोड़ देना आवश्यक था।[34] पक्के यहूदी मसीही विश्वास को पूरी तरह से शैतानी मानते थे। इब्रानियों के लेखक ने अपने आरम्भिक पाठकों को यीशु के महायाजक होने की सच्चाई समझाने के लिए आवश्यक समय और स्थान लिया।

सिद्धता की ओर बढ़ने के लिए चेतावनी और शिक्षा (5:11—6:20)

इब्रानियों की पुस्तक में हम एक और उपदेश में आ गए हैं। 5:11 से आरम्भ करके अध्याय

6 तक लेखक ने जो कुछ वह सिखा रहा था उसकी तीसरी विस्तृत प्रासंगिकता दी। पहला और दूसरा उपदेश 2:1-4 और 3:7—4:16 में मिलते हैं।

मानसिक सुस्ती के कारण जिन मसीही लोगों को लिखा गया था वे उन विचारों को गहराई से नहीं समझ पाए थे जो लेखक उन्हें समझाना चाहता था। इसलिए अपने पत्र की गम्भीर बातों को समझाने से पहले उसने उन्हें आत्मिक परिपक्वता को बढ़ाने को याद दिलाया। उसने उन्हें उनकी अपरिपक्वता के चिह्नों की ओर ध्यान दिलाते हुए 5:11-14 में नकारात्मक रूप में यह याद दिलाया।

बेपरवाही की नाकामी (5:11-14)

[11]इसके विषय में हमें बहुत सी बातें कहनी हैं, जिसका समझाना भी कठिन है; इसलिए कि तुम ऊंचा सुनने लगे हो। [12]समय के विचार से तो तुम्हें गुरु हो जाना चाहिए था, तौभी क्या यह आवश्यक है, कि कोई तुम्हें परमेश्वर के वचनों की आदि शिक्षा फिर से सिखाए? और ऐसे ही हो गए हो, कि तुम्हें अन्न के बदले अब तक दूध ही चाहिए। [13]क्योंकि दूध पीने वाले बच्चे को तो धर्म के वचन की पहिचान नहीं होती, क्योंकि वह बालक है। [14]पर अन्न सयानों के लिए है, जिनके ज्ञानेन्द्रिय अभ्यास करते करते, भले-बुरे में भेद करने के लिए पक्के हो गए हैं।

आयत 11. मसीही लोग जिन्हें लिखा गया था **ऊंचा सुनने लगे** थे। पुराने समय के इस्राएल की तरह (4:2) उन्होंने जो कुछ सुना था उससे लाभ नहीं उठाया था। जो कुछ हम सुन रहे हैं उस पर ध्यान न देकर और उसे अपने जीवन में लागू न करके हम अपनी आत्मिक योग्यताओं को खो सकते हैं। मत्ती 25 अध्याय में तोड़ों को दृष्टांत इस खतरे का अच्छा उदाहरण है।

मसीही व्यक्ति के लिए बढ़ने और आत्मिक बहरेपन से बचने के लिए परमेश्वर के प्रकाशन का अध्ययन करते रहना आवश्यक है। ये लोग मसीही आत्मिकता के उच्च स्तर नहीं बढ़े थे (आयत 11)। वे वास्तव में पीछे को चले गए थे।

तीमुथियुस में चाहे कम से कम एक "आत्मिक वरदान" था, परन्तु फिर भी उसे उस वरदान को प्रज्वलित करने की आज्ञा दी गई थी (2 तीमुथियुस 1:6) न कि उसकी बेपरवाही करने की (1 तीमुथियुस 4:14)। यदि तीमुथियुस जैसे विशेष वरदान पाए हुए व्यक्ति के लिए लगन से अध्ययन करना आवश्यक था (2 तीमुथियुस 2:15) तो क्या हम अपने लिए इससे कुछ भी कम की उम्मीद कर सकते हैं? उन मसीही लोगों की तरह ही जिनके नाम इब्रानियों की पुस्तक लिखी गई थी जो बुरी स्थिति में चले गए थे, हम भी अपने आत्मिक बहरेपन के दोषी हैं।

मृत सागर के कुमरान के समुदाय से मिले दस्तावेज़ों और फिलो के लेखों में चाहे मलिकिसिदक के विचार की बात है पर इस अवधारणा पर शायद आम तौर पर चर्चा नहीं होती थी। शायद अपने पाठकों के इस विषय पर से अनजान होने के कारण लेखक को उन्हें अपनी बात समझाने में कठिनाई थी। हमारे समय में भी पास्टरों को मलिकिसिदक के बारे में कही गई बातों को समझने में समस्या आती है (7:1-10)। यदि इन मसीही लोगों ने ध्यान से सुना होगा

तो उन्हें पवित्र शास्त्र के गम्भीर अध्ययनों को बेहतर समझ लेना था।

आयत 12. अपरिपक्वता का दूसरा संकेत सिखाने की उनकी अयोग्यता था: **समय के विचार से तो तुम्हें गुरु हो जाना चाहिए था, तौभी क्या यह आवश्यक है, कि कोई तुम्हें परमेश्वर के वचनों की आदि शिक्षा फिर से सिखाए।** उनकी समस्या समझ की कमी नहीं थी; इसके विपरीत उनकी योग्यताओं ने उनकी स्थिति को और भी निन्दनीय बना दिया था। उन्होंने इस स्थिति में पड़ना कभी नहीं चाहा था परन्तु मानसिक सुस्ती से यह हो गया था।[35] मसीह में बालक होने में कोई बुराई नहीं है, क्योंकि मसीही जीवन आरम्भ करने वाला हर व्यक्ति यहीं से आरम्भ करता है। पौलुस ने कुरिन्थुस के मसीही लोगों को "बालक" (*nēpios*; 1 कुरिन्थियों 3:1) और अधिक विकसित सदस्यों को "सियाने" (*teleios*; 1 कुरिन्थियों 14:20) कहा। उसने अन्य भाइयों को परमेश्वर की इच्छा की अपनी सोच में "सिद्ध" ("सयाने"; NIV) और "पूरी तरह से आश्वस्त" होने को कहा (कुलुस्सियों 4:12)।

जिस परिपक्वता की उन मसीही लोगों से जिन्हें लिखा गया था, लेखक को अपेक्षा थी कि वह एक उच्च स्तर पर सच्चाई के अर्थ को समझने और उसकी सराहना करने की थी। बालक प्यारा लगता है परन्तु यदि समय बीतने पर वह बालक असहाय बच्चा ही रहे तो यह निराशा वाली बात है। वर्षों से मसीही रहने वाले पुरुष और स्त्रियों को जब आत्मिक वास्तविकताओं की समझ न हो जिनका उनके लिए बड़ा अर्थ, आकर्षण और शक्ति होनी चाहिए थी, तो यह चिंता की बात है।

कुछ देर तक बुनियादी शिक्षा को सुनने के बाद इब्रानी मसीही लोगों को पुराने नियम की भविष्यद्वाणियों यीशु मसीह के प्रतीकों को समझने के योग्य होना चाहिए था; परन्तु वे इतने बड़े नहीं हुए थे कि वे पवित्र शास्त्र की इन बातों को समझ कर आनन्द कर सकें। ऊंचा सुनने वाले व्यक्ति के लिए उस संदेश को समझना कठिन हो सकता है जो हम उन्हें बताने की कोशिश कर रहे हैं; यहां जिन मसीही लोगों की बात है आत्मिक रूप में उनकी स्थिति ऐसी ही थी।

हर विश्वासी मसीही के लिए राज्य की उन सच्चाइयों को अगली पीढ़ी तक पहुंचाने जितना ज्ञान होना चाहिए (देखें 2 तीमुथियुस 2:2)। हो सकता है कि वे पूर्णकालिक शिक्षक न बन सकें पर वे व्यावहारिक, हर दिन सिखाने वाले बन सकते हैं। आरम्भिक कलीसिया में सिखाने वाले थे, जिन्हें सिखाने के लिए विशेष रूप में नियुक्त किया गया था (इफिसियों 4:11); दूसरे लोग दिन प्रतिदिन सिखाते थे (प्रेरितों 5:32; 8:4)। हर मसीही को चाहे वह बढ़िया शिक्षक नहीं हो सकता था, इतना ज्ञान होना चाहिए कि वह अपनी आशा का कारण बताने के लिए "उत्तर दे" सके (1 पतरस 3:15)।

इस डांट में लेखक ने पहली बार अपने पाठकों को उनकी आात्मिक परिपक्वता के लिए उनकी निंदा की। जब कलीसिया का आरम्भ हुआ तो कुछ मसीही लोगों को प्रेरितों के हाथ रखने के द्वारा आत्मिक वरदान मिलते थे (1 कुरिन्थियों 12:28; देखें प्रेरितों 8:14–17; 19:1–6; रोमियों 1:11; 1 कुरिन्थियों 12:4–7; 2 तीमुथियुस 1:6)। काफी समय बीत जाने के बाद सिखाने वाले न बनने के लिए इस डांट का अर्थ यह है कि इन विशेष दान पाए हुए सिखाने वालों के साथ साथ सिखाने का आश्चर्यकर्म के द्वारा दिया गया दान खत्म हो जाना था। दूसरों को उनकी जगह भरने के लिए परिपक्व उपदेश बनने के लिए अपनी स्वाभाविक गुणों को

बढ़ाना आवश्यक होना था। इफिसियों 4:8–15 यह दिखाता है कि विशेष रूप से दान पाए हुए इन उपदेशकों ने पवित्र शास्त्र के पूर्ण प्रकाशन के दिए जाने तक कलीसिया को अगुआई देने में सहायता की। आश्चर्यकर्म के दान प्रभावी सेवा में नवजात कलीसिया को बढ़ने के लिए थे, परन्तु मसीही लोगों की अगली पीढ़ी को आत्मिक उन्नति से बढ़ाए गए स्वाभाविक गुण पर निर्भर रहना था।

2 तीमुथियुस 2:2 में पौलुस के दिमाग में सिखाने के दायित्व की बात की थी: ''और जो बातें तू ने बहुत गवाहों के साम्हने मुझ से सुनी हैं, उन्हें विश्वासी मनुष्यों को सौंप दे; जो औरों को भी सिखाने के योग्य हों।'' उसने संकेत दिया कि कलीसिया का भविष्य सच्चाई के सही रूप से अगली पीढ़ी में दिए जाने पर निर्भर था।

व्यक्तिगत विकास प्रयास के द्वारा होता है। न बढ़ पाना या विकास की प्रारम्भिक व्यवस्था को भूज जाने तक चले जाना उसके विपरीत है जिसकी मसीह हम से उम्मीद करता है। इस तीखी डांट से अपनी सभा में इसे पढ़ने जाने पर सुनकर इब्रानी मसीहियों को सावधान हो जाना चाहिए था।

हम किसी को यह कहते हुए सुन सकते हैं, ''मैं उपदेशक बनने के लिए इसलिए नहीं बढ. सका क्योंकि मेरी जिम्मेदारी नहीं थी।'' याकूब ने कहा कि उपदेशक बनने में एक बड़ी ज़िम्मेदारी है। उसने कहा कि जो लोग दूसरों को बताने की इच्छा रखते हैं उन्हें कड़ाई से दण्ड मिलेगा (याकूब 3:1)। कड़ाई से दण्ड का यह तथ्य बढ़ने से विश्वासी लोगों को रोकने वाला नहीं होना चाहिए कि वे सुसमाचार को किसी दूसरे को न बता सकें। जब हम वफ़ादारी से सच्चाई को दूसरों तक पहुंचाते हैं तो हम उनके लिए एक बड़ी आशीष बन जाते हैं। परमेश्वर हमारी शिक्षा को और हमारे द्वारा सुसमाचार के संदेश को सुनने वालों को आशीष देता है। सिखाए जाने और दूसरों को मसीह में लाने से बढ़कर मसीही व्यक्ति को और किसी बात से प्रसन्नता नहीं मिल सकती। यूहन्ना ने इसे इस प्रकार से कहा है: ''मुझे इस से बढ़कर और कोई आनन्द नहीं, कि मैं सुनूं, कि मेरे लड़के बाले सत्य पर चलते हैं'' (3 यूहन्ना 4)।

परमेश्वर के वचनों की आदि शिक्षा की अवधारणा पुराने और नये दोनों नियमों की शिक्षाओं पर लागू हो सकती है। पुराने नियम की व्यवस्था को प्रेरितों 7:38 में ''जीवित वचन'' कहा गया है। रोमियों 3:2 में इसे ''परमेश्वर के वचन'' के रूप में दिखाता है। नये नियम की शिक्षा यानी डॉक्ट्रिन को भी ''परमेश्वर का वचन'' कहा गया है (1 पतरस 4:11)। व्यवस्था ने इस्राएलियों को मसीह की शिक्षा के लिए तैयार किया। इसे ''मसीह तक पहुंचाने के लिए शिक्षक'' बताया गया है (गलातियों 3:24)। इसने विशेष रूप में यहूदियों के लिए यह काम किया। परन्तु अपने जैसे मसीही लोगों के लिए भी शिक्षक का काम करती है। पुराने नियम से हमें आज्ञा मानने के नियमों का पता चलता है और नये नियम से हमें पता चलता है कि हमें आज क्या आज्ञा माननी है।

इब्रानियों 6:1 में हम ''मसीह की शिक्षा की आरम्भ की बातों'' के विषय में देखते हैं। ''परमेश्वर के वचनों'' और मसीह के नियमों के बीच अन्तर हो सकता है परन्तु ये बातें एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक होने वाली बातें हैं। ''शिक्षा'' (*stoicheion*) का अर्थ ''वर्णमाला के अक्षर'' या ''मूल तत्व'' हो सकते हैं जिन से भौतिक संसार बनता है (2 पतरस 3:10,

12) I[36] विचार यह है कि ''आपको फिर से मसीहियत की ABC सीखनी होगी।'' एक अर्थ में हम अपनी ABC कभी पीछे नहीं छोड़ते हैं परन्तु शब्दों के बार बार उन्हें दोहराते रहने के कारण वे अक्षर हमारे स्वभाव में रच बस जाते हैं। एक और संदर्भ में मूल नियमों को न सीख पाना गणित के उच्च श्रेणी के छात्र जैसा होगा जिसने कभी पहाड़े नहीं सीखे। हर समस्या के साथ उसे उन्हें दोहराना पड़ना था।

परमेश्वर के वचन में **दूध** है और ''मांस'' (KJV) या **अन्न** है। तंदुरुस्त रहने के लिए केवल ''दूध'' लेना शर्म की बात है। पहली सदी में यह आम बोलचाल की भाषा लगती है जिसका इस्तेमाल पौलुस द्वारा किया गया (1 कुरिन्थियों 3:1, 2)।

आयत 13. ''दूध पीने वाले मसीही'' वे हैं, जिन्हें **धर्म के वचन की पहचान नहीं** है। या ''धार्मिकता के वचन में निपुण नहीं हैं'' (NKJV)। कुरिन्थियों की प्रेम की कमी ने उनके विकास को रोक दिया था। उन्नति को रोकने के लिए आवश्यक नहीं कि ज्ञान की कमी ही काम करती हो, क्योंकि ज्ञान देने के लिए कुरिन्थियों की कलीसिया में सभी आवयश्क आत्मिक वरदान थे (1 कुरिन्थियों 1:6, 7)। परमेश्वर के वचन पर ध्यान की उनकी कमी, जो केवल पढ़ने से बढ़कर है, से वे लगातार बालकपन की ओर चले गए। कुछ प्रचारकों को लगता है कि मण्डलियों को केवल ''दूध'' ही देना आवश्यक है और वे आदि शिक्षा से कभी आगे नहीं बढ़ते। शायद अपने अपर्याप्त ज्ञान के कारण। दूसरे ऐसे सरमन देते हैं जो अधिकतर सदस्यों के लिए बहुत गहराई वाले होते हैं। हमें मूल बातों का और अधिक उन्नत नियमों का प्रचार करना आवश्यक है। ''अन्न'' दिए बिना हम प्रचारक मण्डली के लोगों को ''पूर्ण विकसित'' होने में सहायता कैसे कर सकते हैं?

आयत 14. इस आयत में **सयानों** यानी उनकी बात की गई है जो आत्मिक परख करने की ''पूरी उम्र'' में पहुंच गए हैं। ऐसे मसीही हो सकते हैं कि बहुत बूढ़े न हों। इस व्यक्ति और आयत 13 वाले ''बालक'' में अन्तर है। ''बालक'' के लिए सम्पूर्ण उद्धार तक बढ़ने के लिए ''वचन के दूध'' की लालसा करना आवश्यक है (1 पतरस 2:2)। वचन की लगातार खोज करते और जो कुछ सीखा गया हो उसे *इस्तेमाल करते हुए* जल्दी ही **भले-बुरे में भेद** करना आ सकता है। हर पवित्र जन का यही लक्ष्य होना चाहिए। उदाहरण के लिए इब्रानियों की पुस्तक एक चुनौती है क्योंकि इसमें बहुत साफ़ **अन्न** है। इसे ध्यान से अध्ययन करके और अपनी समझ को इससे स्थिर करके अपने आत्मिक स्तर को बढ़ाया जा सकता है।

प्रासंगिकता

प्रभावशाली महायाजक (5:1, 2)

महायाजक के लिए लोगों के बीच में से एक आदमी होना आवश्यक था, जिसे परमेश्वर द्वारा ठहराया गया हो। उसे अज्ञानियों और भूले-भटकों के साथ नरमाई से पेश आते हुए पाप के लिए बलिदान करना होता था।

हारून ने इन योग्यताओं को अच्छी तरह पूरा किया। वह और मूसा कनान में प्रवेश करने से इनकार करने के इस्राएल के कामों पर गहरे शोक में मुंह के बल गिर गए। उन्होंने उन से जो

दूर चले गए थे, अर्थात जो परमेश्वर के विरुद्ध विद्रोह कर रहे थे और उन अगुओं से जिन्हें उसने लोगों के लिए ठहराया था विनती की (गिनती 14:5)।

महायाजक का काम लोगों को दुख, क्लेश, और दोष से छुड़ाने में सहायता करते हुए उनकी सेवा करना होता था। वह लोगों को हर बलिदान का उद्देश्य समझाता, इस प्रकार से उन्हें अपने पाप के साथ पेश आने और क्षमा को ग्रहण करने में सहायता करता। मूसा के साथ हारून ने परमेश्वर से इस्राएल को छोड़ देने की भीख मांगी (गिनती 14:11–19)। परमेश्वर ने उनकी प्रार्थना का उत्तर दिया परन्तु उसने दोषी को उनके पापों के लिए मृत्यु के थोड़ी देर के दण्ड से बचने की अनुमति नहीं दी (14:20–24)।

परमेश्वर का हमारा ज्ञान (5:1, 2)

अपने पिता परमेश्वर का हमारा ज्ञान हमें हमारे महायाजक के रूप में यीशु मसीह के प्रकाशन के द्वारा मिलता है। इसमें से अधिकतर प्रकाशन इब्रानियों की पुस्तक में ही है, जो कहीं और नहीं मिलता। हम परमेश्वर को इसलिए जानते हैं क्योंकि हम ने उसे देखा है और उसका स्वभाव मसीह में दिखाया गया (यूहन्ना 14:5–11; कुलुस्सियों 2:9)। हम मसीह को वचन के अपने अध्ययन के द्वारा विश्वास से जानते हैं न कि उसके साथ किसी "व्यक्तिगत या अंतरंग अनुभव" के कारण।

मसीही व्यक्ति को पिता, पुत्र या पवित्र आत्मा की ओर से कोई सीधा "अनुभव" नहीं मिला है। प्रभु हम से अब वैसे सीधे बात नहीं करता है, जैसे पहली सदी में आत्मा की प्रेरणा पाए हुए प्रेरितों से करता था। बहुत से लोग परमेश्वर के साथ "व्यक्तिगत और अंतरंग अनुभव" की इच्छा करते हैं परन्तु यह इच्छा पवित्र शास्त्र पर आधारित न होकर भावना पर आधारित होती है।

कोई भी ईश्वरीय प्रकाशन या आश्चर्यकर्म कभी अकेला नहीं रहा है और न ही परमेश्वर किसी के "ईश्वरीय" अनुभव को पाने का दावा करने के आधार पर हम से विश्वास करने की उम्मीद करता है। पौलुस "असली प्रेरित के सभी लक्षणों" के दावे के साथ पुष्टि कर सकता था (2 कुरिन्थियों 12:12)। आज लोग ऐसा नहीं करते।

अज्ञानियों और भूले-भटके लोगों के साथ कोमलता से व्यवहार करना (5:2)

स्तोइकी लोगों के बीच पापियों के प्रति कोमलता बेकार की बात होती होगी। उनका मानना था कि करुणा दया और करुणा का न होना आवश्यक है। भावुक लोगों के प्रति उनका व्यवहार था कि "वे किसी भी सुव्यवस्थित समाज में परेशानी हैं।"[137] परन्तु कलीसिया के लिए मसीह की तरह ही उनके लिए जो "निर्बल ... और लंगड़े" हों गहरी चिंता करना आवयश्क है (12:12, 13)। महायाजक जो पुरुषों में प्रमुख होता था, में उनके लिए जिन्हें सहायता की आवश्यकता रहती थी, कोमलता भरी करुणा होना आवश्यक होता था।

वास्तव में हठीले पापी होते हैं; परन्तु वे भ्रमित आत्माएं हैं जो "वे उन भेड़ों की समान जिनका कोई रखवाला न हो" होते हैं (मत्ती 9:36)। हमें अपने आपको को देखते हुए कि हम भी परीक्षा में न पड़ जाएं तरस खाना आवश्यक है (गलातियों 6:1, 2; NKJV)। हो सकता है कि वे परमेश्वर की ओर वापस आना चाहते हों परन्तु उन्हें अपने आप में कोई रास्ता नहीं

मिल सकता। निर्बल संतों के लिए "चरवाहे" होने की ज़िम्मेदारी चाहे प्राचीनों के लिए एक विशेष कर्त्तव्य है (13:17), परन्तु भूले-भटके भाइयों की सहायता करने का काम हर मसीही को सौंपा गया है।

प्राचीनों और सुसमाचार प्रचारकों के काम में पुराने नियम के वास्तविक याजक वाली कुछ समानताएं हैं। परमेश्वर की कलीसिया के अगुओं को अपने अधीन लोगों की आत्मिक आवश्यकताओं को पूरा करना आवश्यक है। सेवक अगुवे का काम केवल मण्डली को यह बताना नहीं है कि वे कैसे प्रसन्न रह सकते हैं। वचन के प्रचारक का काम केवल "अच्छी सलाह देना ..., प्रसन्न रहने के अच्छे और सहायक संकेत देना या प्रभावशाली और सफ़ल होने के ढंग बताना ही नहीं है। उसका काम परमेश्वर की ओर से उनके साथ बात करना है।"[38] नाम ले लेकर लोगों के लिए प्रार्थना करना प्राचीनों और प्रचारकों का हर रोज़ का काम है।

कलीसिया के अगुओं की सबसे बड़ी आवश्यकता जब भी कोई समस्या या निर्बलता का पता चले तब मण्डली के लोगों के पास जाना है। अज्ञानियों और भूले-भटकों के साथ प्रभावशाली ढंग से व्यवहार करने के लिए किसी भूले हुए भाई को ढूंढ़ना, उसे उसका पाप बताना और फिर उस पर काबू पाने के लिए सामर्थ के लिए विनम्रतापूर्वक उसके साथ प्रार्थना करना है। उदार होना आसान है और पाप के साथ सही ढंग से व्यवहार करना बहुत कठिन!

जिस प्रकार से महायाजक की अपनी कमज़ोरियां होती थीं, वैसे ही हम में भी हैं। हमें किसी भूले-भटके के पास यही सोचकर जाना आवश्यक है। गलातियों 6:1, 2 में एक आवश्यक आज्ञा है जिसे माना जाना आवश्यक है: "अपनी भी चौकसी रखो कि तुम भी परीक्षा में न पड़ो।" जवानों में करुणामय ढंग से किसी पापी को डांटने का साहस नहीं होता। प्राचीन और बूढ़े सेवकों को इस ज़िम्मेदारी को लेना आवश्यक है। पापी अपने आप में बीमार है, जो आम तौर पर अगुआई की राह देखता है। हो सकता है कि वह किसी कमज़ोर नमूने को मानता रहा हो। हर प्राचीन को वास्तव में हर परिपक्व मसीही को निर्भयता वाली बातों के साथ धार्मिकता का रास्ता भी दिखाना चाहिए। हमें चाहिए कि हम कभी बहुत कठोर न हों परन्तु गलातियों 6:1, 2 की हर बात को माना जाए। चेतावनियां बड़ी चौकसी के साथ दी जाएं।

परमेश्वर के लिए आदर (5:4, 5)

एक प्राचीन की योग्यताओं का परिचय तीमुथियुस 3:1 में दिया गया है: "जो अध्यक्ष होना चाहता है, वह भले काम की इच्छा करता है।" यह इच्छा के बाद आता है और वचन की अगली शर्तों पर लागू होता है। जो व्यक्ति खुलेआम इस पद की इच्छा करता है, आम तौर पर वह आदर का इच्छुक होता है न कि सेवा करने का। प्राचीन यानी ऐल्डर होना बेशक एक "भला काम" है और व्यक्ति को इस पद के योग्य योग्यताएं होने की इच्छा होनी चाहिए। परन्तु कलीसिया में पद के लिए "दौड़ना" प्राचीनों और डीकनों की भूमिकाओं के एक गलत विचार को दिखाएगा। दूसरे लोग यदि उन्हें लगता है कि कोई योग्य है तो वे उसे चुनें; उसका काम आनन्द से सेवा करने का है।

प्राचीन या डीकन के काम की भूमिका में लोगों का आदर इतना नहीं होता। इन पदों को स्वीकार करने वालों को प्राणों के प्रधान चरवाहे द्वारा दिए जाने वाले उन्हें सम्मान की प्रतीक्षा के

लिए तैयार होना चाहिए (1 पतरस 5:1-4)। मसीह ने अपनी बढ़ाई नहीं चाही; बल्कि उसने उसके पुत्र होने और उसके ठहराने की घोषणा परमेश्वर को करने दी (इब्रानियों 5:5, 6)। उसने "अपनी महिमा नहीं की" (देखें यूहन्ना 8:54; 17:1, 5; प्रेरितों 3:13)।

किसी को भी कलीसिया की स्वीकृति पाए बिना प्राचीन यानी ऐल्डर के रूप में काम करने का ख्याल नहीं करना चाहिए। अपने ऐल्डरों यानी प्राचीनों का चयन करना मण्डली का काम है (प्रेरितों 6:3)। जो प्राचीन किसी अयोग्य मित्र, सम्बन्धी या साथी को प्राचीनों में मिला लेते हैं वे ऐसे काम की कीमत चुकाएंगे। इससे नाराज़गी बढ़ सकती है या लोग कलीसिया को छोड़कर जा सकते हैं।

पुराने नियम के याजकों के लिए नियम नये नियम के प्राचीनों वाली योग्यताओं वाले ही नहीं हैं, परन्तु आज्ञा मानने के परमेश्वर के नियम वही हैं। मसीही अगुवे के लिए परमेश्वर के दिशा-निर्देशों को मानना आवश्यक है, चाहे वह स्पष्ट बताए गए हों या उनका संकेत किया गया हो।

परमेश्वर ने गतसमनी में यीशु की प्रार्थना का उत्तर कैसे दिया (5:7)

हम आम तौर पर कहते हैं कि परमेश्वर तीन प्रकार से प्रार्थना का उत्तर देता है: "हां," "नहीं," या "थोड़ी प्रतीक्षा करो।" ऐसे शब्द बाइबल में स्पष्ट नहीं बताए गए हैं परन्तु हमें उनकी स्वीकृति लेने के बारे में चौकसी बरतनी चाहिए।

प्रभावशाली प्रार्थना के लिए शर्तें हैं, जैसे विश्वास करना कि परमेश्वर उत्तर दे सकता है और देगा (याकूब 1:5-7)। हमें यीशु के नाम में प्रार्थना करनी आवश्यक है (यानी "उसके अधिकार से"; देखें यूहन्ना 14:13), जिसका अर्थ उसके लिए प्रार्थना करना है जो परमेश्वर की इच्छा से मेल खाता है (1 यूहन्ना 5:14)। पौलुस ने समझाया कि हमारे परमेश्वर की प्रतिज्ञाएं सदा "हां" वाली ही होती हैं (2 कुरिन्थियों 1:18-20)। हमारी प्रार्थनाएं परमेश्वर की इच्छा के अनुरूप हों; यदि हम उसके दीन और आज्ञाकार बच्चों के रूप में प्रार्थना करते हैं तो यह स्वाभाविक हैं। यीशु ने क्रूस से छुटकारे के लिए ही प्रार्थना नहीं की; इससे भी महत्वपूर्ण यह है कि उसने परमेश्वर की इच्छा के पूरा होने की प्रार्थना की (मत्ती 26:42)। इसलिए उसकी प्रार्थना का उत्तर "हां" के साथ दिया गया।

पौलुस में जब शरीर की कमज़ोरी थी, जो शैतान की ओर से पड़ रही थी, तो उसने उत्तर मिलने से पहले तीन बार प्रार्थना की। उत्तर था, "पौलुस, मेरे पास केवल चंगाई देने से बढ़कर तेरे लिए कुछ बढ़िया है। यदि तू दुख को सहता रहे तो, तो तेरे द्वारा मेरे संदेश की शक्ति और तेज़ चमकेगी।" पौलुस ने माना कि वह इस उत्तर के कारण दुख में प्रसन्न रह सका। उसकी प्रार्थना का उत्तर भी "हां" के साथ दिया गया क्योंकि वह वही करने को तैयार था जो परमेश्वर उससे करवाना चाहता था (2 कुरिन्थियों 12:7-10)।

हमारी प्रार्थनाओं का उत्तर मिल जाएगा, जब हमारी प्रार्थना ऐसी सोच वाली हों। पवित्र शास्त्र हमें यही सिखाता है। परमेश्वर सही ढंग से व्यक्त की गई प्रार्थना का उत्तर देता है। इससे हमें विश्वास से की गई प्रार्थनाओं में और भरोसा बढ़ना चाहिए। यीशु ने यह बताने के लिए कि बड़ी से बड़ी आवयश्कता के अपने समय में सहायता के लिए हमें कहां और क्यों मुड़ना चाहिए इस का सामर्थ से भरा उदाहरण दिया।

जैसे यीशु ने सीखा, वैसे ही हम भी सीखें (5:8, 9)

आज्ञा मानना तभी आता है जब कोई विश्वास से, परमेश्वर की आज्ञाओं को मानता है चाहे उस में उन्हें कोई तर्क दिखाई न दे। जो दिखने में तर्कसंगत है केवल उसे मानना वास्तविक आज्ञापालन नहीं है। कम से कम विश्वास से आज्ञापालन तो नहीं है। परमेश्वर जिस चीज़ की हम से मांग करता है हो सकता है कि वह हर बात तर्कसंगत न हो। जब हम अपनी सबसे प्यारी मूर्तियों को छोड़कर छोटे बच्चों की तरह समर्पित हो जाते हैं तो वास्तव में हमने आज्ञा मानी होती है। तभी हमें समझ में आता है कि वास्तविक आज्ञापालन क्या है। यह सोच दुख सहने से मिल सकती है। बिना संदेह किए बिना आज्ञा मानना सिद्ध नहीं होता। हमें पूरी तरह से अपने आपको परमेश्वर की करुणा पर छोड़ देना आवश्यक है। अपनी किसी भी भलाई का दावा किए बिना। जब हम पूरी तरह से आज्ञा मानते हैं तब हमें पवित्र लोगों के रूप में सिद्ध, पूरे और परिपक्व बनाया जाता है।

दुख सहना बड़े लाभ का हो सकता है जब इसे इस समझ के साथ स्वीकार किया जाता है कि परमेश्वर हमारी भलाई के लिए उपाय करेगा। दुख सहना जो लोगों को अन्याय लगता है शायद वही सबसे बड़ा तर्क है जो पापियों द्वारा परमेश्वर के विरुद्ध किया जाता है। लोग पूछते हैं, "परमेश्वर यदि सचमुच मुझ से प्रेम करता है तो वह मेरे साथ ऐसा कैसे होने दे सकता है?" यीशु ने कोई पक्का उत्तर नहीं दिया। परन्तु क्रूस पर उसका दुख सहना किसी भी मनुष्य के उत्तर से बेहतर उत्तर है। उसने अपने चेलों को सिखाया था कि पिता उनकी चिंता आकाश के पक्षियों और खेत के फूलों से बढ़कर करता है (मत्ती 6:26–34), परन्तु उन सच्चाइयों को मानना केवल तभी हो सकता है जब हम अपनी ओर से उद्धारकर्त्ता की मृत्यु को पूरी तरह से स्वीकार करके क्रूस के सामने घुटने टेकें। बिना किसी दिखाई देने वाले तर्कसंगत कारण के वह सबसे बड़ा दुख सहना था; परन्तु हमारा मानना है उसके लिए ईश्वरीय प्रकाशन के कारण वह एक बड़ा उद्देश्य था (रोमियों 3:23–26; 5:8, 9)।

परमेश्वर के इकलौते और अनोखे पुत्र यीशु ने पुकारा, "हे मेरे परमेश्वर, हे मेरे परमेश्वर, तू ने मुझे क्यों छोड़ दिया?" हम उस पूरी हुई भविष्यद्वाणी की गहराइयों को नहीं समझ सकते (भजन संहिता 22:1), परन्तु हम विश्वास से मान सकते हैं कि यीशु दुख सहने के एक दर्जे तक पहुंचा, जिसमें बिना परमेश्वर की निकटता के वह उसमें भरोसा रखने के लिए अकेला रह गया था। उसने वहां तक अपने पिता की इच्छा पर भरोसा किया और हमें भी वैसे ही करना आवश्यक है। परमेश्वर की संतान के रूप में हमारे लिए उसके प्रेम का अर्थ यह नहीं है कि हमें दुख सहने से छूट मिल जाएगी; वास्तव में इसका अर्थ इसके विपरीत है। हमारी सोच के लिए यह तर्कहीन लग सकता है, क्योंकि जो कुछ हमें मूर्खता वाली बात लगती है वह परमेश्वर के लिए समझदारी की हो सकती है। क्रूस मसीह के लिए मुकुट से पहले आया, और यह हमारे लिए ऐसा ही होगा। हम मसीह को ग्रहण करते समय अपने तर्क देने की योग्यता को दोषी नहीं ठहराते हैं, परन्तु हमें हर बात के लिए कारण ढूंढ़ने की इच्छा पर काबू पाना आवश्यक है। केवल परमेश्वर पर भरोसा रखकर और उसकी आज्ञा को मानकर ही मसीह में और उसकी मृत्यु में बपतिस्मा लेकर हम उसमें पाए जाने वाले जीवन के नयेपन में आ सकते हैं (देखें रोमियों 6:3, 4)।

अनन्त उद्धार (5:9)

''संतों की अटलता'' या ''बेदीनी या विश्वासत्याग की असम्भावना'' की कैल्विनवादी शिक्षा की सफ़ाई है कि ''यदि अनन्त तो यह खो नहीं सकता।'' यह विचार यह है कि मसीही व्यक्ति ''अनुग्रह से गिर'' नहीं सकता। जो उद्धार मसीह ने हमें देने की पेशकश की है वह अनन्त है, परन्तु हम उस अद्भुत आशीष में अपने भागीदारी को खो सकते हैं। केवल विश्वासियों की ही ''रक्षा परमेश्वर की सामर्थ से, विश्वास के द्वारा उस उद्धार के लिए, जो आने वाले समय में प्रगट होने वाली है, की जाती है'' (1 पतरस 1:5)।

क्या कोई अपने विश्वास को खो सकता है ? पौलुस ने कुछ लोगों का नाम लिया जो जिनका ''विश्वास रूपी जहाज़ डूब गया'' था (1 तीमुथियुस 1:19)। इस विचार के सम्बन्ध में रोमियों 11:22 सबसे स्पष्ट कहता है, ''इसलिए परमेश्वर की कृपा और कड़ाई को देख! जो गिर गए उन पर कड़ाई, परन्तु तुझ पर कृपा, यदि तू उसमें बना रहे, नहीं तो तू भी काट डाला जाएगा।'' हम गलातियों 5:4 में पाई जाने वाली स्पष्ट बात का इनकार कैसे कर सकते हैं ? वहां पर पौलुस ने कहा, ''तुम जो व्यवस्था के द्वारा धर्मी ठहरना चाहते हो, मसीह से अलग और अनुग्रह से गिर गए हो।'' यह मान्यता कि इन आयतों में बताए गए लोग वास्तव में कभी बदले ही नहीं थे केवल एक मान्यता यानी कल्पना है।

''तुम्हें गुरु हो जाना चाहिए'' (5:12)

इब्रानी मसीही लोगों को सिखाने की ज़िम्मेदारी थी। क्योंकि उन्होंने वचन को सुना, इसे ग्रहण किया, इसे माना। हर मसीही की नैतिक ज़िम्मेदारी है कि जो कुछ उसे पता है कि उसे उद्धार कैसे मिला वह दूसरों को भी बताए। ''गुरु'' पेशेवर प्रचारकों को नहीं कहा गया है। कोई भी जिसने उद्धार पा लिया है उसे चाहिए कि वह सुसमाचार की आज्ञा मानने के ढंग के ज्ञान को दूसरों को बताए। मसीही व्यक्ति में किसी खोजी मित्र के साथ कुछ आयतों को साझा करने की योग्यता होनी चाहिए। यदि किसी ने मसीही शिक्षा की मूल बातों पर कुशलता नहीं पाई है तो वह दूसरों को प्रभु और उसके वचन से प्रेम करने के लिए प्रभावित नहीं कर सकता।

आत्मिक परिपक्वता में कैसे बढ़ें (5:14)

आत्मिक परिपक्वता जोश के एक बड़े धमाके में नहीं आती, जो पाप और कमज़ोरी पर काबू पा ले। हम ने कुछ लोगों को यह कहते सुना है, ''मैं प्रभु में आ गया और उसके बाद मैंने कभी शराब नहीं पी'' (या सिग्रेट या तम्बाकू नहीं लिया या कोई बुरी बात नहीं की)। बहुत अच्छे! चाहे ऐसे व्यक्ति ने मसीह में आने के समय जो कुछ करने का निश्चय किया था उसे अपनी आदतों में बदलाव करके सफलतापूर्वक पूरा किया पर आवश्यक नहीं है कि उन प्रलोभनों की उसकी लालसाएं तुरन्त और बिल्कुल खत्म हो गई हों। ऐसे लक्ष्यों केा पाने के लिए हमें और ''धार्मिकता के वचन'' के साथ व्यवहार (आयत 13) आवश्यक हैं।

जीवन में हमारे बदलाव उसी के द्वारा आते हैं जो हम ने सीखा या जो हमें सिखाया गया है। जब कोई यह विश्वास करता है कि काम गलत है और उसे मन परितर्वत के समय त्याग देना आवश्यक है तो वह उस काम को जिसे वह पाप मानता है छोड़ देने का गम्भीर प्रयास करेगा।

हम जो कुछ भी हैं वह शिक्षा के कारण ही है इसलिए हमारे स्वभाव के कुछ नये गुण पूरी तरह से ढालने के लिए समय के साथ विकास आवश्यक है। यह मत भूलें कि पवित्र लोगों को अपने आपको संसार से अलग करके अपनी पवित्रता पर काम करना आवश्यक है। प्रार्थना करें कि परमेश्वर आपको एक परिपक्व, अन्न खाने मसीही में बढ़ने में सहायता करे।

यह कहना कि ''मुझे इसमें ... कोई बुराई नहीं दिखती'' केवल हमारी आत्मिक परख की कमी को ही दिखाएगा और विचाराधीन सही और गलत की पहचान करने को नहीं। कुछ ''अस्पष्ट'' बातें हैं, जिन्हें यह बता पाना कि सही है या नहीं, कठिन हो सकता है। परन्तु आत्मा में बढ़ने वाला व्यक्ति परमेश्वर के नियमों की धर्मी शर्तों और पापियों के प्रति करुणा की आवश्यकता दोनों को समझता है, सर्वशक्तिमान को भाने वाला जीवन बिताए। आज कलीसिया की हमारी सबसे बड़ी समस्या मसीही लोगों की बड़ी गिनती है जो झूठी शिक्षा के खतरों में तय नहीं कर पाते हैं।

एक प्रचारक ने एक बार कहा, ''अधिकतर मसीही लोग 'बीच में रहने वाले' हैं।'' उसके कहने का अर्थ था, ''वे मिस्र और कनान के बीच हैं यानी खतरे के स्थान से बाहर, परन्तु अभी विश्राम और अपनी समृद्ध विरासत के स्थान में नहीं।''[39] बिना संकोच किए विश्वास को व्यवहार में लाना ''बीच में रहने वालों'' की स्थिति से बाहर निकाल देगा।

टिप्पणियां

[1]जोसेफस *वार्स* 4.3.6, 10. [2]जेम्स बर्टन कॉफ़मैन, *कमैंट्री ऑन हिब्रूज़* (आस्टिन, टैक्ससः फ़र्म फ़ाउंडेशन पब्लिशिंग हाउस, 1971), 97–98. [3]रेमंड ब्राउन, *द मैसेज ऑफ हिब्रूज़ः क्राइस्ट अवब ऑल,* द बाइबल स्पीक्स टुडे (डाउनर्स ग्रोव, इलिनोयः इंटर-वर्सिटी प्रैस, 1982), 97. [4]डोनल्ड ए. हैग्नर, *एनकाउंटरिंग द बुक ऑफ हिब्रूज़ः ऐन एक्सपोज़िशन,* एनकाउंटरिंग बाइबल स्टडीज (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगनः बेकर एकेडमिक, 2002), 82. [5]थामस हेविट, *द एपिस्टल टू द हिब्रूज़ः ऐन इंट्रोडक्शन एंड कमैंट्री,* द टिंडेल न्यू टैस्टामेंट कमैंट्रीज़ (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगनः विलियम बी. ईर्डमैंस पब्लिशिंग कं., 1960), 95; डोनल्ड गुथरी, *हिब्रूज़,* द टिंडेल न्यू टैस्टामैंट कमैंट्रीज़ (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगनः इंटर-वर्सिटी प्रैस, 1983), 125. [6]क्रेग आर. कोस्टर, *हिब्रूज़ः ए न्यू ट्रांस्लेशन विद इंट्रोडक्शन एंड कमैंट्री,* एंकर बाइबल, अंक 36 (न्यू यॉर्कः डबलडे, 2001), 287. [7]आगे प्राचीन प्रार्थना दी गई है जो प्रधान याजक को अपने लिए और अपने परिवार के लिए करनी होती थी: ''हे परमेश्वर, मैंने तेरे सामने गलती और अपराध और पाप किया है, मैंने और मेरे परिवार ने और हारून की संतान ने जो तेरे पवित्र लोग हैं। हे परमेश्वर, मेरी प्रार्थना है कि उन गलतियों और अपराधों को और मेरे पापों को क्षमा कर दे जो मैंने तेरे विरुद्ध किए हैं और उन पापों को जो मेरे परिवार ने तेरे विरुद्ध किए हैं'' (*मिद्राश योमा* 4:2; गरेथ एल. रीस, *ए क्रिटिकल एंड एक्सेजेटिकल कमैंट्री ऑन द एपिस्टल टू द हिब्रूज़* [मोबरली, मिजोरीः स्क्रिप्चर एक्पोज़िशन बुक्स, 1992], 73, एन. 15) में उद्धृत। मन्दिर के पर्दे के भीतर जाने से पहले यह बोला जाता था। [8]हेविट 96. [9]कोस्टर 286. [10]जेम्स टी. ड्रेपर, जूनि., *हिब्रूज़, द लाइफ दैट प्लीज़ेज़ गॉड* (व्हीटन, इलिनोयः टिंडेल हाउस पब्लिशर्स, 1976), 115.

[11]जोसेफस *एन्टिक्विटीज़* 15.3.1; 2 मक्काबियों 4:7. [12]प्रेरितों 6:1–7 में कलीसिया की सेवा करने के लिए चुने गए पुरुषों का चयन कलीसिया द्वारा पवित्र आत्मा द्वारा प्रकट की गई योग्यताओं को ध्यान में रखते हुए किया गया था। इसलिए यह कहा जा सकता है कि उन सातों को अपने अपने काम में पवित्र आत्मा ने लगाया था था, चाहे यह काम परोक्ष रूप में किया गया था। उन सातों को ''डीकन'' तो नहीं कहा गया था परन्तु उनके *सेवकाई* के काम का वर्णन उसी क्रिया रूप से किया गया है जिसका अर्थ ''डीकन,'' ''सेवक'' या ''मिनिस्टर'' होता है। [13]फिलिप एजकुम्ब ह्यूजस, *ए कमैंट्री ऑन द एपिस्टल टू द हिब्रूज़* (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगनः विलियम बी. ईर्डमैंस

पब्लिशिंग कं., 1977), 181. [14]वही, 15. [15]एफ. एफ़. ब्रूस, *द एपिस्टल टू द हिब्रूज़,* द न्यू इंटरनैशनल कमैंट्री ऑन द न्यू टैस्टामैंट (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: विलियम बी. ईर्डमैंस पब्लिशिंग कं., 1964), 97. [16]चाहे यीशु की सेवकाई की भी बात हो, ''सदा के लिए'' का अर्थ ''जब तक समय है'' हो सकता है। यह पूरे मसीही काल तक रहेगी जो कि उसके द्वितीय आगमन के समय खत्म हो जाएगा, बिल्कुल वैसे ही जैसे हारून की याजकाई तब तक रही जब तक मूसा का युग ओर व्यवस्था प्रभावी रहे (निर्गमन 40:15; गिनती 25:13)। (रीस, 76, एन. 26.) [17]हेविट, 100–1. [18]कई टीकाकारों का कहना है कि इस कथन के बावजूद कि उसकी उसने सुनी जो उसे मृत्यु से बचा सकता था बाग में यीशु की प्रार्थना उत्तर नहीं दिया गया था। [19]जेम्स थॉम्पसन, *द लैटर टू द हिब्रूज़,* द लिविंग वर्ड कमैंट्री (आस्टिन, टैक्सस: आर. बी. स्वीट कं., 1971), 77. [20]ब्राउन, 100.

[21]नील आर. लाइटफुट ने बताया कि परमेश्वर ने छुटकारे के लिए मसीह की प्रार्थना का उत्तर उसका भय कम करने, बाग में समय से पूर्व उसकी मृत्यु से बचाने, और पुनरुत्थान के द्वारा उसे मृत्यु से छुड़ाने सहित कई ढंगों से दिया हो सकता है। (नील आर. लाइटफुट, *जीज़स क्राइस्ट टुडे: ए कमैंट्री ऑन द बुक ऑफ़ हिब्रूज़* [ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: बेकर बुक हाउस, 1976], 109, 114–15.) जेम्स टी. ड्रेपर, जूनि., ने इसे बेहतरीन ढंग से बताया है: ''बेशक परमेश्वर ने उसकी प्रार्थना सुनी। बेशक परमेश्वर ने उसकी प्रार्थना का उत्तर दिया'' (ड्रेपर, 123)। [22]रेय सी. स्टेडमैन, *हिब्रूज़,* द IVP न्यू टैस्टामैंट कमैंट्री सीरीज़ (डाउनर्स ग्रोव, इलिनोय: इंटरवर्सिटी प्रैस, 1992), 65. [23]ब्रूक फॉस वेस्टकॉट, *द एपिस्टल टू द हिब्रूज़: द ग्रीक टैक्स्ट विद नोट्स एंड ऐसेज़* (लंदन: मैक्मिलन एंड कं., 1889; रिप्रिंट, ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: विलियम बी. ईर्डमैंस पब्लिशिंग कं., 1973), 126. [24]साइमन जे. किस्टमेकर, *एक्सपोज़िशन ऑफ द एपिस्टल टू द हिब्रूज़,* न्यू टैस्टामैंट कमैंट्री (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: बेकर बुक हाउस, 1984), 137. [25]डब्लयू. एच. ग्रिफिथ थॉमस, *हिब्रूज़: ए डिवोशनल कमैंट्री* (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: विलियम बी. ईर्डमैंस पब्लिशिंग कं., 1975), 64. [26]रीस, 78, एन. 33. [27]लाइटफुट, 110. [28]ब्राउन, 101. [29]गुथरी, 131. [30]थॉम्पसन, 78.

[31]कोएस्टर, 290. [32]थॉम्पसन, 79. [33]ब्राउन, 102. [34]ऑर्थर डब्ल्यू. पिंक, *ऐन एक्सपोज़िशन ऑफ़ हिब्रूज़* (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: बेकर बुक हाउस, 1954), 262. [35]''के पास आए हो'' का पूर्णकाल ''पिछले कार्य के बने रहने वाले कार्य'' का संकेत देता है (ब्राउन, 105)। [36]लाइटफुट, 112. [37]गुथरी, 125–26. [38]*द इंटरप्रेटर'स बाइबल,* संपा. जॉर्ज ऑर्थर बटरिक (नैशविल्ल: अबिंग्डन प्रैस, 1955), 11:641 में जे. हेरी कॉटन, ''द एपिस्टल टू द हिब्रूज़: एक्सपोज़िशन।'' [39]वारेन डब्ल्यू. विर्यसबे, *बी कॉन्फिडेंट: ऐन एक्सपोज़िशन स्टडी टू द एपिस्टल टू द हिब्रूज़* (व्हीटन, इलिनोय: विक्टर बुक्स, 1982), 61.